BAMV(N)-350

भारतीय शास्त्रीय संगीत का प्रगत अध्ययन–गायन एंव प्रयोगात्मक– कोर इलेक्टिव
षष्ठम सेमेस्टर

संगीत में स्नातक (बी0ए0) कोर इलेक्टिव
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग
मानविकी विद्याशाखा
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

BAMV(N)-350

भारतीय शास्त्रीय संगीत का प्रगत अध्ययन–गायन एंव प्रयोगात्मक

संगीत में स्नातक (बी0ए0) कोर इलेक्टिव

षष्ठम सेमेस्टर

संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग

मानविकी विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

तीनपानी बाईपास रोड, ट्रान्सपोर्ट नगर के पीछे,

हल्द्वानी–263139

फोन नं0 : 05946–286000 / 01 / 02

फैक्स नं0 : 05946–264232,

टोल फ्री नं0 : 18001804025

ई–मेल : **info@uou.ac.in**

वेबसाईट : **www.uou.ac.in**

अध्ययन मंडल समिति

अध्यक्ष
कुलपति
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

संयोजक
निदेशक– मानविकी विद्याशाखा,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

प्रो0 पंकजमाला शर्मा (स.)
पूर्व विभागाध्यक्षा, संगीत विभाग
पंजाब विश्वविद्यालय,चंडीगढ़

डॉ0 विजय कृष्ण (स.)
पूर्व विभागाध्यक्षा, संगीत विभाग
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

डॉ0मल्लिका बैनर्जी (स.)
संगीत विभाग,
इग्नू, नई दिल्ली

प्रदीप कुमार (स.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

डॉ0 द्विजेश उपाध्याय (आ.स.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

डॉ0 जगमोहन परगांई (आ.स.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

डॉ0 अशोक चन्द्र टम्टा (आ.स.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

डॉ0 प्रकाश चन्द्र आर्या (आ.स.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

पाठ्यक्रम संयोजन एवं संपादन

डॉ0 जगमोहन परगांई
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

प्रूफरिडिंग एवं फार्मेटिंग

डॉ0 जगमोहन परगांई
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

डॉ0 अशोक चन्द्र टम्टा
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

इकाई लेखन

1.	**डॉ0 जगमोहन परगांई**	इकाई 1, 2
2.	**डॉ0 रेखा साह**	इकाई 5
3.	**डॉ0 विजय कृष्ण,** **डॉ0 जगमोहन परगांई**	इकाई 3, 4
4.	**डॉ0 अशोक चन्द्र टम्टा**	इकाई 6

कापीराइट : @उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
संस्करण : सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति
प्रकाशन वर्ष : जनवरी 2026
प्रकाशक : निदेशालय, अध्ययन एवं प्रकाशन,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल–263139
ई–मेल : **books@uou.ac.in**

नोट– इस पुस्तक की समस्त इकाईयों के लेखन तथा कॉपीराईट संबंधी किसी भी मामले के लिए संबंधित इकाई लेखक जिम्मेदार होगा। किसी भी विवाद का निस्तारण सत्र न्यायालय–हल्द्वानी अथवा उच्चन्यायालय–नैनीताल में किया जाएगा। इस सामग्री के किसी भी अंश को उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अथवा मिमियोग्राफी चक्रमुद्रण द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

BAMV(N)-350

भारतीय शास्त्रीय संगीत का प्रगत अध्ययन–गायन एंव प्रयोगात्मक
संगीत में स्नातक (बी0ए0) कोर इलेक्टिव
षष्ठम सेमेस्टर

इकाई 1– राग यमन का विस्तृत अध्ययन (आलाप, स्वर विस्तार, विलम्बित ख्याल एवं छोटा ख्यालदृपूर्ण गायकी सहित, विभिन्न प्रकार की तानें, तराना, ध्रुपद व धमार दुगुन, तिगुन एवं चौगुन लयकारी सहित, कल्याण रागांग पर आधारित रागों का ज्ञान)। पृ0सं0 01–23

इकाई 2– राग भैरव का विस्तृत अध्ययन (आलाप, स्वर विस्तार, विलम्बित ख्याल एवं छोटा ख्याल पूर्ण गायकी सहित, विभिन्न प्रकार की तानें, तराना, ध्रुपद व धमार दुगुन, तिगुन एवं चौगुन लयकारी सहित, भैरव रागांग पर आधारित रागों का ज्ञान) । पृ0सं0 24–45

इकाई 3– तीनताल का विस्तृत अध्ययन (ठेका, ठेके के प्रकार, संगत में प्रयोग, विभिन्न प्रकार की लयकारियां)। पृ0सं0 46–58

इकाई 4– एकताल का विस्तृत अध्ययन (ठेका, ठेके के प्रकार, संगत में प्रयोग, विभिन्न प्रकार की लयकारियां)। पृ0सं0 59–67

इकाई 5– अपनी विधा से सम्बंधित संगीत वाद्य का पूर्ण ज्ञान (संरचना, रख–रखाव, वाद्य मिलाने की विधि, प्रस्तुतिकरण में प्रयोग)। पृ0सं0 68–75

इकाई 6– संगीत का मानव जीवन में महत्व (सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रभावना आदि पहलुओं पर आधारित)। पृ0सं0 76–85

इकाई 1– राग यमन का विस्तृत अध्ययन (आलाप, स्वर विस्तार, विलम्बित ख्याल एवं छोटा ख्याल पूर्ण गायकी सहित, विभिन्न प्रकार की तानें, तराना, ध्रुपद व धमार दुगुन, तिगुन एवं चौगुन लयकारी सहित, कल्याण रागांग पर आधारित रागों का ज्ञान) ।

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 राग यमन का विस्तृत अध्यन

1.3.1 आलाप, स्वर विस्तार

1.3.2 विलम्बित ख्याल एवं छोटा ख्याल पूर्ण गायकी सहित, विभिन्न प्रकार की तानें

1.3.3 तराना

1.4 राग यमन में ध्रुपद व धमार की बन्दिशें लिपिबद्व करना एवं लयकारी

1.4.1 ध्रुपद गायन का संक्षिप्त परिचय

1.4.2 राग यमन में ध्रुपद एवं धमार की दुगुन, तिगुन, चौगुन लयकारी

1.5 कल्याण रागांग पर आधारित रागों का ज्ञान

1.6 सारांश

1.7 शब्दावली

1.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.0 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी.ए. संगीत के पाठ्यक्रम बी0ए0एम0वी0(एन)–350 के छठे सेमेस्टर की पहली इकाई है, जिसमें संगीत के मूलभूत सिद्धांतों के साथ–साथ रागों की संरचना एवं प्रस्तुति के व्यावहारिक पक्ष को समझने पर विशेष बल दिया गया है। इस इकाई में बंदिशों एवं गीतों को लिपिबद्ध करने की पद्धति का भी विस्तृत विवेचन किया गया है, जिससे विद्यार्थी रागों की रचना–प्रक्रिया और स्वर–संयोजन को सुव्यवस्थित रूप में समझ सकें।

विशेषतः राग यमन, जो कल्याण थाट का प्रमुख एवं अत्यंत मधुर राग है, उसके आलाप, स्वर–विस्तार, ख्याल–गायकी, तानों, तराना तथा ध्रुपद–धमार की विभिन्न लयकारियों का अध्ययन इस इकाई को और अधिक समृद्ध बनाता है। इस अध्ययन के पश्चात विद्यार्थी न केवल विभिन्न रागों के स्वरूप को पहचान सकेंगे, बल्कि उन्हें स्वरलिपिबद्ध कर लिखित तथा व्यावहारिक दोनों रूपों में प्रस्तुत करने की दक्षता भी प्राप्त करेंगे एंव कल्याण रागांग आधारित रागों का अध्ययन कर सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

- इस इकाई का उद्देश्य विद्यार्थियों को संगीत के मूल तत्व स्वर, ताल, लय एवं राग की व्यवहारिक और सैद्धांतिक समझ प्रदान करना है।
- विभिन्न रागों के स्वरूप, उनके गायन–रूपों, बंदिशों एवं गीत–रचनाओं को पहचानने और उन्हें स्वरलिपिबद्ध करने की क्षमता विकसित करेंगे। साथ ही राग यमन की पूर्ण गायकी, आलाप, ख्याल, तान, तराना तथा ध्रुपद–धमार की लयकारी का अध्ययन कर वे प्रस्तुति–कौशल में दक्ष बनेंगे।
- समझा सकेंगे कि स्वरलिपि पद्धति द्वारा संगीत में रागों, बंदिशों, स्वर सौन्दर्य को लिखित रूप में सर्वसुलभ बनाया जा सकता है।
- रागों में बद्ध रचनाओं को सुनकर स्वयं स्वरलिपि बद्ध करने में समर्थ हो सकेंगे। जिससे नवीन रचनाओं को समझा सकेंगे।
- कत्याण रागांग को समझा सकेंगे।

1.3 राग यमन का विस्तृत अध्ययन :

थाट	–	कल्याण
जाति	–	सम्पूर्ण–सम्पूर्ण
वादी, संवादी	–	गन्धार(ग), निषाद (नि)
गायन समय	–	रात्रि का प्रथम प्रहर
समप्रकृति राग	–	शुद्ध कल्याण, यमनी बिलावल
आरोह	–	सा रे ग, मं प, ध नि सां अथवा नि़ रे, ग, मं प, ध नि, सा।
अवरोह	–	सां नि ध प, मं ग, रे सा
पकड़	–	नि़ रे ग, रे ग मं प, मं ग, रे सा

परिचय – राग यमन, कल्याण थाट का रागांग राग है। रागांग का अर्थ है जो राग अपने थाट के सबसे महत्वपूर्ण राग होते हैं। इस राग को 'कल्याण' नाम से भी जाना जाता है। कहा जाता है मुसलमानों के शासन काल के दौरान 'कल्याण' राग का नाम 'यमन' पड़ गया। यमन राग 'कल्याण' थाट का राग है। यह आश्रय राग भी है क्योंकि राग का नाम एवं थाट का नाम एक ही है तथा रागों की उत्पत्ति थाटों से होती है। इस राग की जाति सम्पूर्ण है क्योंकि राग में सातों स्वरों का प्रयोग होता है। राग में वादी स्वर गन्धार है अर्थात राग का सबसे महत्वपूर्ण स्वर। इस स्वर में सबसे अधिक ठहरा जाता है। इसके बाद का महत्वपूर्ण स्वर संवादी कहलाता है जो कि निषाद स्वर है। राग में वर्जित स्वर शुद्ध मध्यम है क्योंकि राग में तीव्र मध्यम का ही प्रयोग होता है।

1.3.2 अलाप / स्वर विस्तारः

नि़ रे ग, रे सा, मं प, ग मं प, मं ग रे सा, मं ध नि, ध प, सां नि ध नि, ध प मं ग, मं ध नि नि सां, ध नि रें सां, सां नि ध नि ऽ ध प, प मं ग, मं ग रे ग, मं ग रे सा नि़ ध़ नि़ रे सा। नि़ रे ग, मं ध नि ध प, मं ध प मं, रे ग मं ग, मं ग रे ग रे सा।

सा नि़ ध़ नि़ ऽ ध़ प़, प़ ध़ नि़, नि़ ध़ नि़, नि़ रे सा, नि़ रे ग मं प रे, नि़ रे ऽ सा ।

1.3.3 विलम्बित ख्याल एवं छोटा ख्याल–पूर्ण गायकी सहित, विभिन्न प्रकार की तानें

राग यमन– विलम्बित ख्याल (एकताल)

स्थाई – मेरा मन बाँध लीनो रे हाँ रे इन जोगीया के साथ

अन्तरा – सदारंग करम करो क्यूं न इन प्राननाथ के हाथ

स्थाई

नि़	प़	निध	सारे	सा	–	नि़	रे	ग	रे	सा	(सा)
मे	रा	ऽऽ	मन	बाँ	ऽ	ऽ	ध	ली	नो	रे	ऽ
3		4		X		0		2		0	
निनि	(प)	रे	मंमं	प	(प)	ग	रे	ध़	नि़	सा	सा
हाँऽ	रे	ऽ	इन	जो	गी	या	के	सा	ऽ	ऽ	थ
3		4		X		0		2		0	

अन्तरा

ग	मं	प	ध	निनि	(प)	मंग	गप	ग	रे	नि़सारे	स
स	दा	रं	ग	कऽ	रऽ	मऽ	कऽ	रो	ऽ	क्यूंऽ	न
3		4		X		0		2		0	
नि़	रे	ग	मं	निनि	(प)	मंग	प	रे	नि़	रे	सा
इ	न	प्रा	ऽ	नऽ	ना	ऽऽ	थ	के	हा	ऽ	थ
3		4		X		0		2		0	

तानें– अठगुन (8 मात्रा) 3 मात्रा से प्रारम्भ

1. मे रा | ऽऽ मन | बाँ ऽ | ग ग रे सा नि़ रे ग मं | प ध प मं ग रे सा – |

3 4 X 0

नि नि ध प मं ध नि सां	नि ध प मं ग रे सा –

2

प मं ग रे ग मं प ध	नि ध प मं प ध नि सां

0

गं गं रें सां नि रें गं रें	सां नि ध प मं ग रे सा

3

2. मे रा ऽऽ मन बाँ ऽ | नि़ रे ग म॑ प ग म॑ प ध नि ध प ग म॑ ध नि |
4 X 0

| सां नि ध प ग म॑ ध नि रें सां नि ध प म॑ ग रे |
2

| ग म॑ ध नि रें गं रें सां नि ध प म॑ ग रे नि़ रे |
0

| ग म॑ ध नि म॑ नि ध प म॑ ध प म॑ ग रे सा – |
3

3. मे रा ऽऽ मन | बाँ ऽ | नि नि ध प म॑ ध नि सां नि ध प म॑ ग रे सा – |
4 X 0

| गं गं रें सां नि रें गं रें सां नि ध प म॑ ग रे सा |
2

| ध नि सां – नि ध नि सां नि ध प म॑ ग रे सा – |
0

| ग म॑ प ग म॑ प म॑ प ग म॑ प म॑ ग रे सा – |
3

4. मे रा ऽऽ मन | बाँ ऽ | प म॑ ग म॑ प ध प म॑ नि नि ध प म॑ ध नि सां |
4 X 0

| ध नि सां नि ध प म॑ ग रे सा नि़ रे ग रे ग म॑ |
2

| ग म॑ ध म॑ ध नि ध नि सां गं रें सां नि रें सां नि |
0

| ध नि ध प म॑ ध प म॑ ग प म॑ ग रे नि़ रे सा |
3

मे रा ऽऽ मन बाँ
4 X

राग यमन – मध्यलय ख्याल (तीनताल)

स्थाई – ऐरी आली पिया बिन सखी, कलना परत मोहे घरी पल जिन दिन।
अन्तरा – जब तें पिया परदेस गवन कीनो, रतियाँ कटत मोहे तारे गिन गिन।।

स्थाई

														प	गमं
														अ	रीऽ
नि	ध	प	–	–	रे	–	सा	ग	रे	ग	ग	–	–	प	प
ए	ऽ	री	ऽ	ऽ	आ	ऽ	ली	पि	या	बि	न	ऽ	ऽ	स	खि
0				3				x				2			
ग	मं	ग	प	प	ध	प	प	नि	ध	प	प	रे	रे	सा	सा
क	ल	ना	प	र	त	मो	हे	घ	री	प	ल	जि	न	दि	न
0				3				x				2			

अन्तरा

प	प	सां	सां	सां	–	सां	सां	सां	(सां)	नि	ध	नि	ध	प	प
ज	ब	तें	पि	या	ऽ	प	र	दे	ऽ	स	ग	व	न	की	नो
0				3				x				2			
प	गं	रें	सां	नि	ध	प	प	ध	नि	ध	प	रे	रे	सा	सा
र	ति	याँ	क	ट	त	मो	हे	ता	ऽ	ऽ	रे	गि	न	गि	न
0				3				x				2			

8 मात्रा की तानें, सम(x) से प्रारम्भ

1.	नि़रे	गमं	धनि	सांनि	सांनि	धप	मंग	रेसा
2.	पमं	गमं	पध	पमं	गमं	पमं	गरे	सा–
3.	निनि	धप	मंध	पमं	गमं	पमं	गरे	सा–
4.	धनि	धनि	पध	मंप	गमं	धप	गरे	सा–

x

16 मात्रा की तानें खाली (0) से प्रारम्भ

1.	निरे	गमं	पध	निसां	निध	पमं	गमं	पध

x

	निनि	धप	मंप	धनि	सांनि	धप	मंग	रेसा

0

2.	गरे	सारे	गमं	पध	पध	मंप	गमं	पध

x

	नीध	पमं	गरे	सारे	गमं	पमं	गरे	सा–

0

3.	सांसां	नीध	मंप	धनी	धनी	धप	मंप	धनी
	x							
	धनी	धनी	मंप	धनी	सांनी	धप	मंग	रेसा
	0							
4.	पमं	गरे	गमं	पध	निध	पमं	पध	निसां
	x							
	गंगं	रेंसां	निरें	गरें	सांनि	धप	मंग	रेसा
	0							

तराना–

स्थाई

														नि	रे
														ओ	दे
ग	प	ग	रे	नि़	सा	रे	ग	मं	ग	मं	(प)	–	रे	–	मं
ले	ते	दे	ले	त	ऽ	द्रे	द्रे	त	दे	ऽ	न्ना	ऽ	दी	ऽ	म्त
0		ग		3				x				2			
(प)	–	रे	–	रे	सा	सा	रे	ग	रे	सा	नि़	ध़	नि़	ध़	–
दी	ऽ	म्ता	ऽ	न्ना	द्रे	द्रे	तों	ऽ	द्रे	द्रे	त	दा	ऽ	नी	ऽ
0				3				x			ग	2			
प़	ध़	नि़	रे	ग	रे	नि़	रे	ग	–	मं	मं	–	(प)	–	–
दा	नि	दा	नि	उ	दे	दा	नि	दी	ऽ	म्त	द्रे	ऽ	न्ना	ऽ	ऽ
0				3				x			ग	2		सा	
नि़	–	रे	ग	मं	प	–	–	रे	ग	रे	सा	–	सा	नि़	रे
ता	ऽ	न्न	दे	रे	ना	ऽ	ऽ	दी	ऽ	म्त	दा	ऽ	नि,	ओ	दे
0				3				x			ग	2			

अन्तरा–

प	प	प	सां	ध	सां	–	सां	सां	–	सां	–	रें	गं	रें	सां
ना	द्रे	द्रं	दी	ऽ	म्दी	ऽ	म्त	दी	ऽ	म्दी	ऽ	म्त	त	न	दे
0				3				x				2			
नि	नि	–	रें	सां	–	नि	ध	प	प	रे	ग	–	रे	नि़	रे
रे	ना	ऽ	त	नूँ	ऽ	धि	या	ना	रे	नि	ता	ऽ	न्न	दे	सा
0				3				x				2			
गं	–	रें	–	नि	–	(प)	–	ग	–	रे	सा	–	सा	नि़	रे
ना	ऽ	नूँ	अ	दे	अ	रे	ऽ	ना	ऽ	त	दा	ऽ	नि,	ओ	दे
0				3				x				2			

1.4 राग यमन में ध्रुवपद व धमार की बन्दिशें लिपिबद्व करना एवं लयकारी

1.4.1 ध्रुवपद गायन का संक्षिप्त परिचय – ध्रुवपद की बंदिशें एवं उसकी लयकारी को समझने से पूर्व यह आवश्यक है कि हम ध्रुवपद गायन के विषय में एक संक्षिप्त परिचय जान लें।

भारतवर्ष में मध्यकाल से वर्तमान तक ध्रुवपद का प्रचार निरन्तर प्रचलन में है। प्राचीन समय में प्रबन्ध गायन से इसका प्रादुर्भाव हुआ। ध्रुवपद में स्वर, लय तथा साहित्य तीनों अंगों का समुचित संयोग अपेक्षित रहा है। भरत काल में ध्रुवा गीतों का उल्लेख प्राप्त होता है। इन्हीं ध्रुवा गीतों में शनै–शनै परिवर्तन स्वरूप मध्यकालीन ध्रुवपदों का विकास हुआ। ध्रुवपद का आधुनिक नाम ध्रुपद हो गया है। यह दो शब्दों के मेल से बना है ध्रुव तथा पद। ध्रुव का अर्थ होता है 'नियत' या 'दृढ़' तथा पद वह है 'जो गाए जाने योग्य हो'। इस प्रकार नियत पद जिसमें परिवर्तन सम्भव न हो वही ध्रुवपद है।

मध्यकाल में ध्रुवपद गायन अपने चरम पर था। ग्वालियर के राजा मान सिंह ध्रुवपद गायन के विशिष्ट उन्नायकों में थे। तानसेन, बैजू, स्वामी हरिदास, नायक बख्शू आदि इस शैली के सर्वोच्च गायक रहे हैं।

ध्रुवपद गम्भीर प्रकृति की गायकी है। इसे मर्दाना गायकी भी कहा जाता है। अकबर के दरबारी अबुल फजल के अनुसार, "ध्रुवपद का विषय विशेष रूप से पौरूषवान एवं गुणवान व्यक्तियों की प्रशंसा करना है।"

मध्यकाल में ध्रुवपद के तीन खण्ड अथवा धातु होते थे। ये क्रमशः उदग्राह, ध्रुवक तथा आभोग थे। वर्तमान में ये स्थायी, अन्तरा, संचारी एवं आभोग कहलाते हैं। कई ध्रुवपदों में मात्र स्थाई एवं अन्तरा दो भाग ही होते हैं। ध्रुपद गायन में सर्वप्रथम नोम–तोम की आपालचारी से इसका प्रारम्भ होता है। इसके पश्चात बंदिश, लयकारी तथा उपज की जाती है। ख्याल गायन की भांति आकार में द्रुत गति की तानबाजी इस गायकी में वर्जित है। ध्रुवपद गायन में बोलतान, गमक तान, मींड, आन्दोलन आदि का प्रयोग होता है। सर्वप्रथम गीत प्रारम्भ करने से पूर्व नोम–तोम का आलाप किया जाता है तथा गीत आरम्भ कर उसके शब्दों का आलाप किया जाता है। पद रचना के आलाप क्रमशः बढ़त तथा उपज दोनों अंगों से किए जाते हैं। बढ़त में शब्दों की विभिन्न रचनाऐं प्रस्तुत की जाती हैं तथा उपज में दुगुन, तिगुन, चौगुन, आड़, कुआड़ आदि लयकारियों द्वारा ध्रुवपद गायकी और प्रभावशाली बन जाती है।

ध्रुपद गायन में लयकारी पक्ष बहुत महत्वपूर्ण है। इसी के माध्यम से ध्रुवपद गायन में नवीन सौन्दर्य उत्पन्न हो जाता है। विभिन्न क्लिष्ट लयकारियों के द्वारा ध्रुवपद गायन में चमत्कार उत्पन्न किया जाता है। ध्रुवपद गायन में विशेष रूप से पखावज की संगत होती है क्योंकि पखावज के बोल खुले होने के कारण इस गायकी की गम्भीरता से पूर्ण मेल खाते हैं। इसमें निम्न तालों का प्रयोग होता है, जैसे – चौताल, आड़ाचौताल, सूलताल, रूद्र इत्यादि। कुछ रचनाओं में झंपा एवं तीवरा तालों का प्रयोग भी होता है परन्तु वर्तमान में ध्रुपद गायन में विशेष रूप से चौताल, सूलताल एवं तीवरा का अधिक प्रयोग होता है।

1.4.2 राग यमन में ध्रुवपद एवं उसकी दुगुन, तिगुन, चौगुन लयकारी :

राग यमन – चौताल

स्थाई – जय मुकुन्द मधुसूदन राधा रमण हरि आनन्द कन्द गोविन्द गिरिधारी।
अन्तरा – गोपी गोप पति ब्रज पति त्रिभुवन पति, देवन पति रास रसिक मुरली कर धारी।

स्थाई

प	मं	ग	मं	ध	नि	सां	नि	ध	प	मं	प
ज	य	मु	कु	ऽ	न्द	म	धु	ऽ	सू	द	न
X		0		2		0		3		4	
प	नि	ध	प	ध	प	मं	रे	–	ग	–	ग
रा	ऽ	ऽ	धा	ऽ	र	म	न	ऽ	ह	ऽ	रि
X		0		2		0		3		4	
ग	रे	सा	नि़	–	ध़	नि़	रे	ग	ग	–	ग
आ	ऽ	ऽ	न	ऽ	न्द	क	ऽ	ऽ	न्द	ऽ	गो
X		0		2		0		3		4	
मं	ध	नि	सां	नि	ध	प	–	रे	ग	रे	सा
वि	ऽ	न्द	गि	ऽ	रि	धा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	री
X		0		2		0		3		4	

अन्तरा

मं	–	ग	मं	–	ध	सां	–	सां	रें	सां	–
गो	ऽ	ऽ	पी	ऽ	ऽ	गो	ऽ	प	प	ति	ऽ
X		0		2		0		3		4	
नि	रें	–	गं	–	रें	सां	नि	नि	ध	प	प
ब्र	ज	ऽ	प	ऽ	ति	त्रि	भु	व	न	प	ति
X		0		2		0		3		4	X
रे	ग	रे	सा	नि़	रे	ग	मं	ध	नि	ध	प
दे	ऽ	व	न	प	ति	रा	ऽ	स	र	सि	क
X		0		2		0		3		4	
मं	ध	नि	सां	नि	ध	प	–	रे	ग	रे	सा
मु	र	ली	ऽ	क	र	धा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	री
X		0		2		0		3		4	

राग – यमन (ध्रुपद की दुगुन)

स्थाई

पम॑	गम॑	धनि	सांनि	धप	म॑प	पनि	धप	धप	म॑रे	–ग	–ग
जय	मुकु	ऽन्द	मधु	ऽसू	दन	राऽ	ऽधा	ऽ र	मन	ऽह	ऽरि
X		0		2		0		3		4	
गरे	सानि	–ध़	नि़रे	गग	–ग	म॑ध	निसां	निध	प–	रेग	रेसा
आऽ	ऽन	ऽन्द	कऽ	ऽन्द	ऽगो	विऽ	न्दगि	ऽरि	धाऽ	ऽऽ	ऽरी
X		0		2		0		3		4	

तिगुन 8वीं मात्रा से प्रारम्भ

प	म॑	ग	म॑	ध	नि	सां	नि	ध	प	म॑	प
ज	य	मु	कु	ऽ	न्द	म	धु	ऽ	सू	द	न
3						4					
प	नि	ध	प	ध	प	म॑	रे	–	ग	–	ग
रा	ऽ	ऽ	धा	ऽ	र	म	न	ऽ	ह	ऽ	रि
X						0					
ग	रे	सा	नि़	–	स	नि़	रे	ग	ग	–	ग
आ	ऽ	ऽ	न	ऽ	न्द	क	ऽ	ऽ	न्द	ऽ	गो
2						0					
म॑	ध	नि	सां	नि	ध	प	–	रे	ग	रे	सा
वि	ऽ	न्द	गि	ऽ	रि	धा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	री
3						4					

चौगगु सम से प्रारम्भ

प	म॑	ग	म॑	ध	नि	सां	नि	ध	प	म॑	प
ज	य	मु	कु	ऽ	न्द	म	धु	ऽ	सू	द	न
X								0			
प	नि	ध	प	ध	प	म॑	रे	–	ग	–	ग
रा	ऽ	ऽ	धा	ऽ	र	म	न	ऽ	ह	ऽ	रि
				2							
ग	रे	सा	नि़	–	स	नि़	रे	ग	ग	–	ग
आ	ऽ	ऽ	न	ऽ	न्द	क	ऽ	ऽ	न्द	ऽ	गो
0								3			
म॑	ध	नि	सां	नि	ध	प	–	रे	ग	रे	सा
वि	ऽ	न्द	गि	ऽ	रि	धा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	री
				4							

अन्तरा

दुगुन सम से प्रारम्भ

मं –	ग मं	– ध	सां –	सां रें	सा –	नि रें	– गं	– रें	सांनि	नि ध	प प				
गो ऽ	ऽ पी	ऽ ऽ	गो ऽ	प प	ति ऽ	ब्र ज	ऽ प	ऽ ति	त्रि भु	व न	प ति				
X		0		2		0		3		4					
रे ग	रे सा	नि़ रे	ग मं	ध नि	ध प	मं ध	निसां	नि ध	प –	रे ग	रे सा				
दे ऽ	व न	प ति	रा ऽ	स र	सिक	मु र	ली ऽ	क र	धा ऽ	ऽ ऽ	ऽ री				
X		0		2		0		3		4					

तिगुन 8वीं मात्रा से प्रारम्भ

मं	–	ग	मं	–	ध	सां	–	सां	रें	सां	–
गो	ऽ	ऽ	पी	ऽ	ऽ	गो	ऽ	प	प	ति	ऽ
3						4					
नि	रें	–	गं	–	रें	सां	नि	नि	ध	प	प
ब्र	ज	ऽ	प	ऽ	ति	त्रि	भु	व	न	प	ति
X						0					
रे	ग	रे	सा	नि़	रे	ग	मं	ध	नि	ध	प
दे	ऽ	व	न	प	नि	रा	ऽ	स	र	सि	क
2						0					
मं	ध	नि	सां	नि	ध	प	–	रे	ग	रे	सा
मु	र	ली	ऽ	क	र	धा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	री
3						4					

चौगगु सम से प्रारम्भ

मं	–	ग	मं	–	ध	सां	–	सां	रें	सां	–
गो	ऽ	ऽ	पी	ऽ	ऽ	गो	ऽ	प	प	ति	ऽ
3						4					
नि	रें	–	गं	–	रें	सां	नि़	नि	ध	प	प
ब्र	ज	ऽ	प	ऽ	ति	त्रि	भु	व	न	प	ति
X						0					
रे	ग	रे	सा	नि़	रे	ग	मं	ध	नि	ध	प
दे	ऽ	व	न	प	नि	रा	ऽ	स	र	सि	क
2						0					
मं	ध	नि	सां	नि	ध	प	–	रे	ग	रे	सा
मु	र	ली	ऽ	क	र	धा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	री
3						4					

1.4.2 राग यमन में धमार एवं उसकी दुगुन, तिगुन, चौगुन लयकारी :

प					ध									
नि	ध	प	प	प	मं	प	मं	ग	–	रे	ग	ग	प
के	ऽ	ऽ	स	र	घो	ऽ	र	के	ऽ	अं	ऽ	ग	ल
X					2		0			3				
प					रे					रे		ग		
रे	ग	–	रे	सा	ग	ग	सा	नि़	–	नि़	–	रे	ग	
गा	ऽ	ऽ	ऽ	ऊँ	अ	ब	तु	म	ऽँ	ला	ऽ	ऽ	ल	
X					2		0			3				
ग		मं	प		नि		नि			म				
प	मं	ग	ग	मं	ध	नि	सां	नि	ध	प	मं	ग	मं	
क	हां	ऽ	जै	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	हो	ऽ	भा	ऽ	ऽ	ग	
X					2		0			3				

अन्तरा–

					ग									
					रे	ग	प	प	निध	सां	सां	–	सां	
					ब	हु	त	दि	नऽ	ऽ	की	ऽ	न्ही	
X					2		0			3				
सां		ग									ग			
नि	ध	नि	रें	सां	नि	ध	प	प	रे	ग	रे	सा	–	
अ	धे	ऽ	ऽ	का	ऽ	ऽ	इ	ता	ऽ	ऽ	ऽ	को	ऽ	
X					2		0			3				
रे	ग		म		नि									
नि़	रे	–	ग	मं	ध	नि	सां	नि	ध	प	मं	ग	मं	
फ	ल	ऽ	स	ब	पै	ऽ	ऽ	हो	ऽ	आ	ऽ	ऽ	ज	
X					2		0			3				

दुगुन, –8वीं मात्रा (खाली) से प्रारम्भ

प				ध											
नि	ध	प	प	प	मं	प	मं	ग	–	रे	ग	ग	प		
के	ऽ	ऽ	स	र	घो	ऽ	र	के	ऽ	अं	ऽ	ग	ल		
0						3									
प				रे						रे		ग			
रे	ग	–	रे	सा	ग	ग	सा	नि़	–	नि़	–	रे	ग		
गा	ऽ	ऽ	ऽ	ऊँ	अ	ब	तु	म	ऽँ	ला	ऽ	ऽ	ल		
X										2					
ग		मं	प		नि		नि			म				प	
प	मं	ग	ग	मं	ध	नि	सां	नि	ध	प	मं	ग	मं	नि	
क	हां	ऽ	जै	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	हो	ऽ	भा	ऽ	ऽ	ग	के	
0						3								X	

तिगुन, –पहली मात्रा सम) से प्रारम्भ

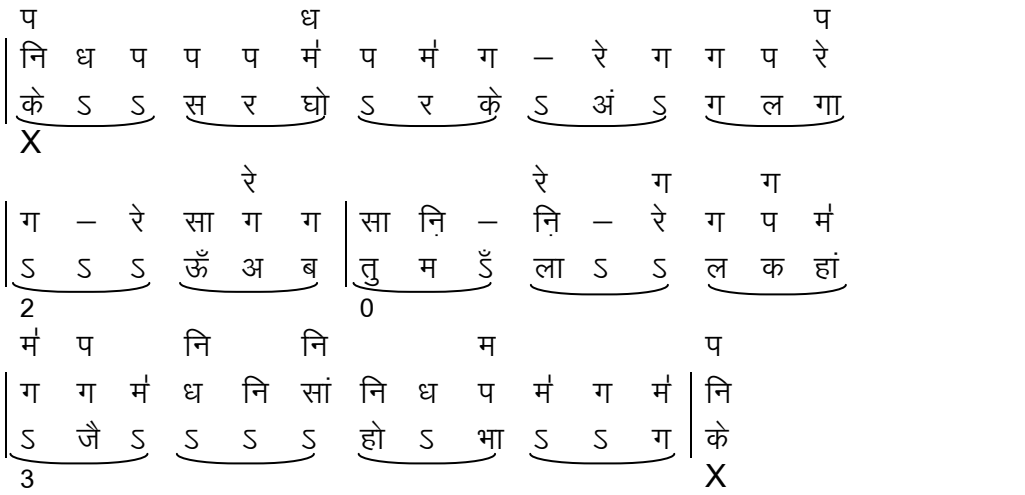

चौगुन, –चौथी मात्रा (3.5) से प्रारम्भ

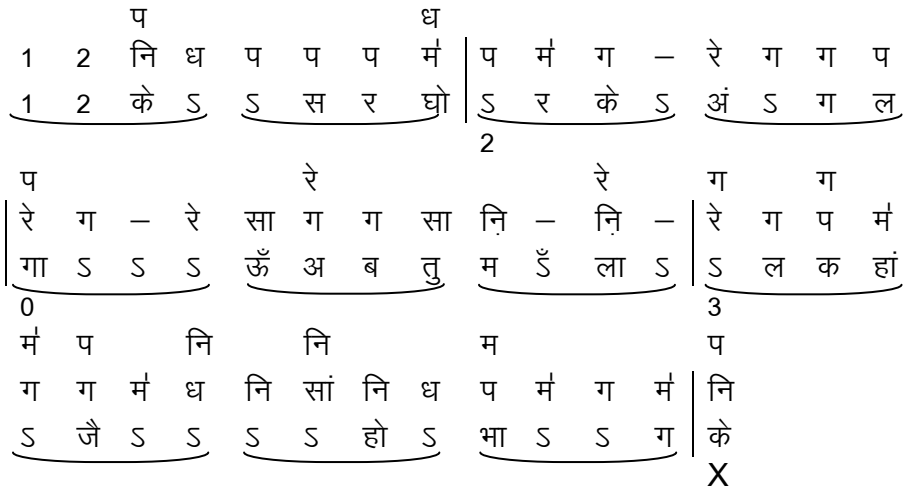

अन्तरा–

दुगुन, –8वीं मात्रा (खाली) से प्रारम्भ

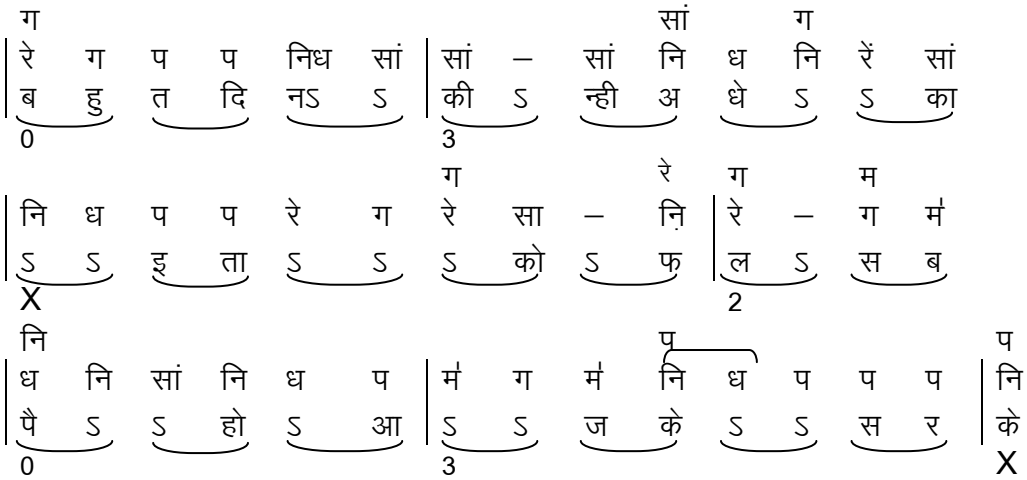

अन्तरा–

तिगुन– पहली मात्रा (सम) से प्रारम्भ

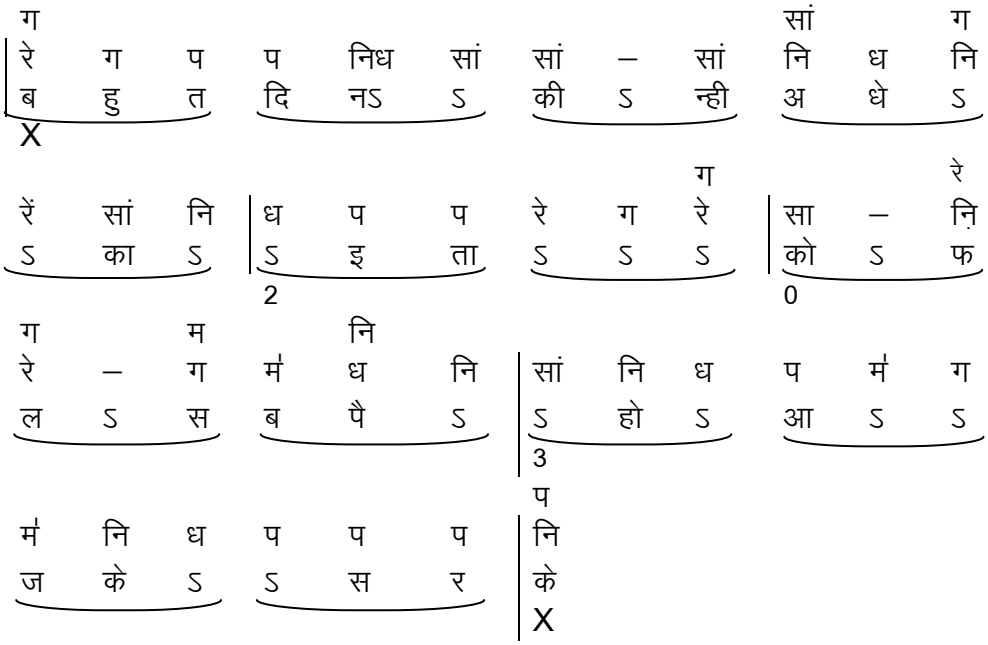

चौगुन, –चौथी मात्रा (3.5) से प्रारम्भ

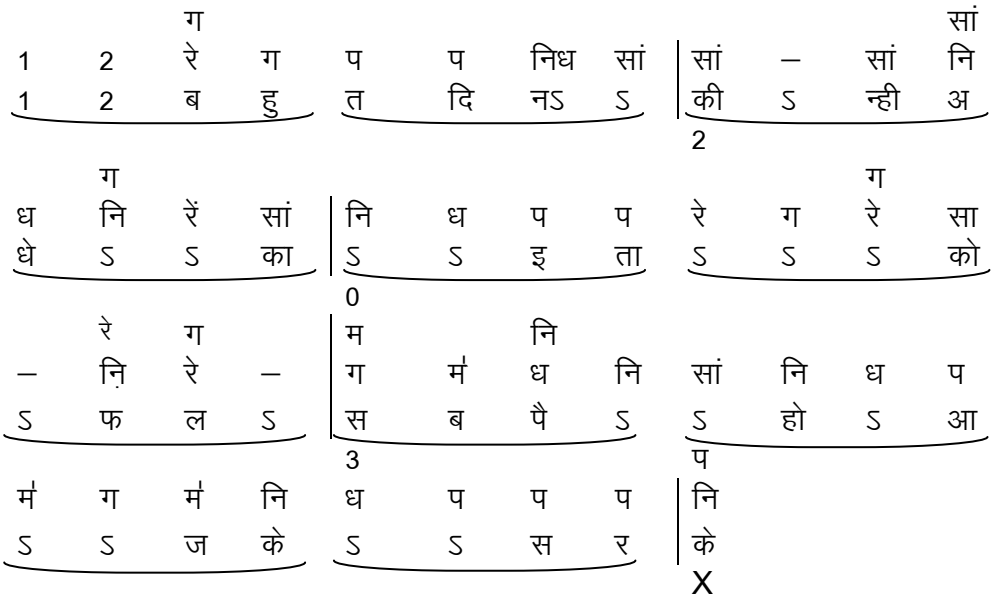

अभ्यास प्रश्न

1) **लघु उत्तरीय प्रश्न :**

(i) ध्रुवपद गायन शैली के विषय में संक्षेप में बताइए।
(ii) ध्रुवपद गायन शैली में लयकारी का क्या महत्व है?
(iii) राग यमन में एक ध्रुवपद लिखिए।

2) **सत्य/असत्य बताइए** :

(i) तानसेन प्रसिद्ध ध्रुवपद गायक थे।
(ii) ध्रुवपद गायन में सूलताल का प्रयोग होता है।
(iii) ध्रुवपद चंचल प्रकृति की गायकी है।

1.5 कल्याण रागांग पर आधारित रागों का ज्ञान

रागांग– प्रमुख रागों में कुछ ऐसे विशिष्ट स्वर समूह पाए जाते हैं जिनसे उनकी स्वतंत्र पहचान बनती है। इन्हीं विशिष्ट व स्वाभाविक छवि निर्माण करने वाले स्वर समूहों को रागांग कहा जाता है, तथा जिन रागों में ऐसे स्वतंत्र अंग उपस्थित हों, वे रागांग प्रधान राग माने जाते हैं। रागांग प्रधान रागों में स्वर–विस्तार और विकास की व्यापक संभावनाएँ उपलब्ध रहती हैं। आधुनिक काल में हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति में रागांग आधारित वर्गीकरण को विशेष महत्त्व प्राप्त हुआ है। इसी पद्धति तथा उसके प्रमुख रागांगों का विवेचन आप प्रस्तुत कर पायेंगे।

रागांग वर्गीकरण प्रणाली स्वर मेल की अपेक्षा स्वरूप साम्य यानी विशिष्ट स्वर संगतियों पर आधारित है। सामान्य पहचान तो राग में प्रयुक्त स्वरों से हो जाती है, परंतु उसकी सूक्ष्म पहचान उन्हीं विशिष्ट स्वर समूहों से संभव होती है जो उसकी मूल छाया को स्पष्ट करते हैं। यह पद्धति मध्यकाल से ही वर्णित मिलती है। नान्यदेव, शारंगदेव और कुम्भ जैसे ग्रंथकारों ने रागांग प्रकार के रागों का वर्णन किया है। मध्यकाल में इस पद्धति का उल्लेख और विस्तार अधिक देखने को मिलता है। कल्लनाथ के अनुसार "रागांग राग वे हैं जिनमें ग्राम–रागों की छाया परिलक्षित होती है। इससे स्पष्ट है कि यदि किसी प्रमुख राग की विशिष्ट स्वर–पद्धति अन्य रागों में भी दिखाई दे, तो वही आगे चलकर उस रागांग का आधार बन जाती है। मध्यकाल में इसे 'होदृभेद' (स्वर भेद) पद्धति के नाम से भी जाना गया। पं. भावभट्ट द्वारा बताए गए अठारह भेद इस क्षेत्र में अत्यंत महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं।

मध्यकाल में मिश्र रागों के निर्माण में इस पद्धति का प्रयोग दृष्टिगोचर होता है। रत्नाकर के अनुसार इस समय में सब मिलाकर 264 से अधिक राग प्रचार में थे। संगीत रत्नाकर में 30 ग्राम राग, 8 उप राग, 20 राग, 96 भाषा, 20 विभाषा, 4 अन्तर भाषा, 21 पूर्व प्रसिद्ध तथा अधुना प्रसिद्ध रागांग, 20 भाषांग, 15 क्रियांग तथा 30 उपांग, कुल 264 रागों के नाम है।

रागांग का शाब्दिक अर्थ है राग का अंग। अर्थात वह विशिष्ट स्वर–संगति जिसके प्रयोग से राग की स्पष्ट पहचान बनती है। जब किसी प्राचीन या सिद्ध राग की स्वरावली अन्य रागों में भी दिखाई दे, तो वही उनके रागांग के रूप में स्वीकार की जाती है। जैसे प रे का प्रयोग कल्याण–अंग को दर्शाता है, जबकि रे प की मींड मल्हार अंग का संकेत देती है।

आधुनिक काल में रागांग वर्गीकरण पद्धति के विकास में पं0 विष्णु दिगम्बर भातखंडे का विशेष योगदान है। उन्होंने प्रचलित रागों के विशिष्ट स्वर समूहों को आधार बनाकर उनका वर्गीकरण किया। उनके अनुसार रागांग वही अंग होता है जो रागों में सर्वाधिक स्पष्ट और प्रमुख रूप में दिखाई देता है जैसे आरोह अवरोह में विशेष स्वरों का त्याग या प्रयोग, वक्रता या कोई विशिष्ट स्वर रचना। उदाहरणार्थ, काफी थाट में पाए जाने वाले पाँच अंग काफी अंग, धनाश्री अंग, कानड़ा अंग, सारंग अंग और मल्हार अंग इसी सिद्धांत को स्पष्ट करते हैं।

पं0 विष्णु दिगम्बर पलुष्कर जी के शिष्य श्री नारायण मोरेश्वर खरे जी ने प्रचलित रागों के अंगभूत टुकड़ों को चुना अथवा ऐसे प्रचलित रागों को खोजा जिनसे अन्य रागों का साम्य हो सके। इस प्रकार के रागों को एक वर्ग में रखकर 'रागांग' संज्ञा से सम्मानित किया गया तथा ऐसे रागांगों की संख्या तीस मानी गयी। इन्हीं रागांगों के राग वाचक स्वरों के आधार पर अन्य रागों के गायन–वादन का विधान ही इस वर्गीकरण की प्रमुख विशेषता है। ये तीस रागांग इस प्रकार हैं–

1- कल्याण **2-** बिलावल **3-** खमाज

4 भैरव **5-** काफी **6-** मारवा

7 तोड़ी **8-** पूर्वी **9-** आसावरी

10- भैरवी **11-** सारंग **12-** ललित

13- भीमपलासी **14-** श्री **15-** विभास

16- पीलू **17-** सोरठ **18-** केदार

19- नट **20-** कानड़ा **21-** बागेश्वरी

22- शंकरा **23-** हिंडोल **24-** आसा

25- मल्हार **26-** भूपाली **27-** कामोद

28- भटियार **29-** बिहाग **30-** दुर्गा

भारतीय संगीत शास्त्र में तुलसी राम देवांगन ने रागांग के लिए बताया कि उत्तर भारतीय संगीत में ऐसे अंग प्रमुख राग जिनके स्वतंत्र अंग सर्वमान्य है तथा जिनकी छाया या अंग प्रभाव दूसरे रागों में दिखायी देते है निम्नांकित हैः–

1- विलावल अंग **2-** काफी अंग **3-** कल्याण अंग

4 धनाश्री अंग **5-** सारंग अंग **6-** कानड़ा अंग

7 मल्हार अंग **8-** [खमाज अंग **9-** भैरव अंग

10- गौरी अंग **11-** श्री अंग **12-** तोड़ी अंग

13- मारवा अंग **14-** भैरवी अंग **15-** आसावरी अंग

16- पूर्वी अंग

अंग के निर्माण में कण, आंदोलन, मींण, न्यास, गमक, सप्तक, इत्यादि तत्वों का महत्वपूर्ण प्रयोग है। क्योंकि इन्हीं तत्वों के प्रयोग अथवा अभाव से विभिन्न रागांग एक दूसरे से पृथक दिखते हैं। कल्याण रागांग का भी स्वयं का एक पृथक स्वरूप है जिसकी व्यापकता अनंत है। कल्याण रागांग का मुख्य राग आधार कल्याण राग है, जो कि कल्याण थाट एवं कल्याण अंग के समस्त रागों का आधार राग है। मध्ययुग में अनूप संगीत रत्नाकर ग्रंथ में भावभट्ट द्वारा में 18 रागों के 148 राग भेद दिए थे व उन्होंने कल्याण के 13 भेद बताए हैं। किंतु कल्याण राग का नाम संगीत रत्नाकर तथा इसके पूर्व के ग्रंथों में प्राप्त नही होता है।

जयसुखलाल त्रिभुवनशाह के अनुसार 'रागांग' उन तत्वों का समूह है जिनके आधार पर किसी राग के स्वररूप में (1) स्वरों के परिवर्तन, (2) स्वर–संख्या में वृद्धि या कमी, (3) स्वर–संगतियों के वक्र रूप,

तथा (4) अन्य रागों के संयोगकृके माध्यम से नए राग विकसित किए जाते हैं, इस प्रकार कि मूल राग का स्वरूप स्पष्ट बना रहे। इसी प्रकार 'शिवमत भैरव, बंगाल भैरव, अहीर भैरव' आदि अनेक राग रागांग परंपरा के उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

अतः यह निश्चित है कि राग उत्पत्ति और वर्गीकरण का 'वैज्ञानिक एवं तर्कसंगत आधार थाट नहीं, बल्कि रागांग' है। किसी कलाकार, शिक्षक या छात्र के लिए रागांगों की जानकारी अनिवार्य है; जिन व्यक्तियों को रागों के मूल अंगों की जितनी अधिक समझ होती है, वे उतने ही आत्मविश्वास और शुद्धता के साथ प्रस्तुति दे पाते हैं। संगीत प्रस्तुति में यह जानना अत्यंत आवश्यक है कि किसी मूल राग के प्रधान अंगों का प्रयोग कहाँ और कैसे किया जाए, क्योंकि इन्हीं प्रधान, मौलिक व मिश्रित अंगों के माध्यम से राग अपनी विशिष्ट पहचान प्राप्त करता है। जैसे बिलावल अंग, भैरव अंग, तोड़ी अंग, सारंग अंग, मल्हार अंग आदि–ये सभी रागों की पहचान के आधार हैं।

डॉ. जतिंद्र सिंह खन्ना का मत है कि रागों को एक 'प्रधान अंग' पहचान दिलाता है। उदाहरणस्वरूप "तोड़ी अंग"कृमियाँ की तोड़ी का प्रधान अंग होने के कारण, इससे संबद्ध अनेक राग अपनी पहचान बनाते हैं। गुर्जरी तोड़ी, वैरागी तोड़ी आदि राग तोड़ी अंग के आधार पर ही पहचाने जाते हैं। इसी प्रकार विलासखानी तोड़ी भले ही भैरवी के स्वरों को ग्रहण करती हो, परंतु उसकी चलन तोड़ी की है, इसलिए उसे तोड़ी का प्रकार माना जाता है।

राग अभ्यास एवं प्रस्तुति की दृष्टि से आवश्यक है कि कलाकार 'रागांग' को समझे; थाट की जानकारी केवल सामान्य वर्गीकरण तक सीमित रहती है। बिना तोड़ी अंग के भूपाल तोड़ी, गुर्जरी तोड़ी, वैरागी तोड़ी जैसे राग; बिना सारंग अंग के वृंदावनी सारंग, मध्यमाद सारंग; तथा बिना कान्हड़ा अंग के दरबारी, आड़ाना, नायकी, सुहा आदि राग–गाए या बजाए नहीं जा सकते, चाहे उन्हें योजनाबद्ध रूप से किसी थाट में रखा गया हो।

इतिहास भी इस बात की पुष्टि करता है कि रागांग पद्धति प्राचीनतम समय से मान्य रही है। जौनपुर के सुल्तान हुसैन शर्की रागांग प्रणाली के समर्थक थे और उन्होंने 'श्याम' के बारह रूपों का उल्लेख किया, जिनका वर्णन फकीरुल्ला के 'रागदर्पण' में प्राप्त होता है।

अधिकांश विद्वानों की दृष्टि में थाट केवल एक 'गणितीय वर्गीकरण' है, जबकि संगीत केवल गणित नहीं, बल्कि भाव, संरचना और परंपरा का जीवंत संगम है। थाट स्वयं में स्थिर तथा अक्रिय है– उसे गाया या बजाया नहीं जा सकता; इसके विपरीत राग अपने नियमों, अंगों और विविध चलनों के माध्यम से सदैव सजीव रहते हैं। यही कारण है कि एक ही राग विभिन्न कलाकारों द्वारा विविध रूपों में सौन्दर्यपूर्ण प्रस्तुति प्राप्त करता है, और इसका आधार राग का 'अंग स्वरूप' होता है, न कि थाट।

स्पष्ट है कि ''रागांग–पद्धति एक वैज्ञानिक, व्यावहारिक और संगीत–दृष्ट्या प्रमाणिक आधार है'', जबकि थाट रागों पर थोपे गए एक काल्पनिक ढाँचे के रूप में प्रतीत होते हैं। थाट वर्गीकरण के व्यापक प्रसार के बाद भी रागांग–पद्धति का प्रभाव बना रहना ही इसकी उपयोगिता का प्रमाण है।

भारतीय शास्त्रीय संगीत में रागांग–व्यवस्था अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। यह व्यवस्था रागों के मूल स्वरूप, उनके विशेषीय तत्वों तथा उनके पारिवारिक संबंधों को स्पष्ट करती है। 'रागांग' शब्द का तात्पर्य उस मूल रूप, ढाँचे या संरचना से है, जिसके आधार पर अनेक राग निर्मित होते हैं। उत्तर भारतीय संगीत परम्परा में दस थाटों में से 'कल्याण थाट' और उससे सम्बद्ध 'कल्याण रागांग को अत्यंत प्रतिष्ठित माना गया है। कल्याण रागांग की विशेषता यह है कि इसके अंतर्गत आने वाले रागों में

एक विशिष्ट कोमल–मधुर, निबल–प्रसादात्मक भाव प्रकट होता है, जिसमें करुण, माधुर्य, शान्त तथा अनुरागपूर्ण रस का प्रभाव सूक्ष्म रूप से व्याप्त रहता है।

कल्याण रागांग का मुख्य एवं आधारभूत राग ''राग यमन'' है, जिसे कई संगीताचार्य कल्याण थाट का प्रतीक राग भी मानते हैं। यमन की संरचना, उसकी विशिष्ट चलन, वादी–संवदी व्यवस्था तथा स्वर प्रयोग की पद्धति अन्य कल्याण रागांग के रागों के लिए एक आदर्श ढाँचा बनाती है। इसी ढाँचे के आधार पर अनेक राग विकसित हुए हैं, जिनमें भिन्न–भिन्न लक्षण जुड़े हुए हैं, परंतु मूल रूप से उनमें 'तीव्र मध्यम' का प्रयोग और 'कल्याण अंग' का प्रभाव विशेष रूप से देखा जाता है।

कल्याण रागांग की प्रमुख विशेषताएँ

कल्याण रागांग की पहचान करने हेतु कुछ मूलभूत तत्त्व अत्यंत महत्वपूर्ण माने जाते हैं

1. मध्यम् तीव्र कल्याण अंग के रागों की मुख्य विशेषता है।
2. नि़ रे सा ध़ नि़ रे ग रे सा, म' प ध प, प मं प , प मं ध प, ध मं प, प रे सा प मं ग प ध प सां, प ध प सां, प प सां, मं प सा, मं ध प सां, रे ग रे प मं ग मंधनिसां, पधनिसां, मंधनिरें सां नि ध सां ।

कल्याण अंग के रागों मे उपर्युक्त किसी न किसी स्वर संगतियों का बाहुल्य रूप से प्रयोग होगा जो कल्याण को इंगित करता रहेगा।

राग कल्याण के गायकी का विस्तार तीनों सप्तको में होता है, परन्तु राग का मुख्य स्वरूप पुर्वांग में होने के कारण पुर्वांग प्रधान रागों में यह प्रमुख माना जाता है

''षड्ज तो प्रत्येक राग का महत्वपूर्ण स्वर होता ही है परन्तु राग कल्याण में विशेष बात यह है कि राग गायकी में नि़ रे ग, व ग रे नि़ ध़ नि़ रे ग इत्यादि स्वर संगतियों का बाहुल्य होने के कारण क्षणिक समय के लिए षइज का अल्पत्व दृष्टिगोचर होता है। परन्तु षड्ज की यह अल्पत्वता राग के सौदर्य एवं आकर्षण को बढ़ाने में पूर्ण सहायक होता है।''

प–रे की संगति कल्याण अंग की मुख्य संगतियों में से एक है । प रे की संगति कल्याण अंग के अधिकांश रागों में दृष्टिगत होती है। कुछ रागों में स्पष्ट रूप से व कुछ रागों मे कण स्वर के रूप में। कल्याण अंग के अधिकांश रागों मे अंतरा अथवा उत्तरां ग की उठान प प सां अथवा प ध प सां इन संगतियों से होती है ततपश्चात् मं ध नि सां, म' प ध नि सां, मं ध नि रें इत्यादि संगतियों से भी उत्तरांग गाया जाता है।

अंधिकांशतः कल्याण अंग के राग सांय गेय यथा रात्रि के प्रथम प्रहर में गाए बजाए जाते हैं। सांयकालीन रागों मे कल्याण राग महत्वपूर्ण स्थान है।

कल्याण थाट व कल्याण अंग के बहुदा राग प्रचलन में है। सभी रागों में कल्याण अंग का कोई न कोई प्रतीक चिह्न अथवा विशेषता अवश्य ही दृष्टिगत होती है। तीव्र मध्यम् स्वर कल्याण सूचक है। राग यमन अथवा राग कल्याण के अतिरिक्त यमन कल्याण नाम का राग भी अस्तित्व में है जिसमें दोनों मध्यम प्रयोग होते हैं। जैसे–निरेगमंप , प मं ग म ग इस प्रकार दोनों मध्यम प्रयुक्त होते हैं।

दक्षिण भारत के गुणीजनों के मतानुसार राग यमन कर्नाटक संगीत के यमुनाकल्याण अथवा जमुना कल्याण का ही प्रकार है।

पं0 रामाश्रय झा के अनुसार–''यमन कल्याण राग को कुछ विद्धान जैमिनी कल्याण अथवा जमुना कल्याण भी कहते है।

उपरोक्त शुद्ध मध्यम् के अतिरिक्त राग का अन्य सभी नियम एवं अलाप–तान इत्यादि कल्याण की तरह ही है।'' यमन कल्याण के अतिरिक्त अन्य कुछ रागों में भी दोनों मध्यमों का प्रयोग होता है जैसे हमीर, केदार, कामोद, छायानट, श्यामकल्याण, गौड़सारंग, मारू बिहाग नन्द, आदि। पं0 नारायण मोरेश्वर खरे जी ने केदार को भी एक रागांग राग बताया है। सा म म गप , मंपधप, ध निध प, मंप ध प मंध म, ममसारे सा इस प्रकार केदार दोनों मध्यम् प्रयुक्त किए जाते हैं। केदार के विभिन्न प्रकारों का वर्णन कुछ पुस्तकों में वर्णित है जैसे जलधर केदार, मलुहा केदार, बसन्ती केदार नट केदार, आदि। राग हमीर में ग म निध प, ध मं प, ग म रे सा इस प्रकार दोनों मध्यम् प्रयोग किये जाते हैं। इन रागों मे अवरोह में वक्र कोमल निषाद का प्रयोग होता है।

राग श्याम कल्याण में कल्याण व कामोद का मिश्रण अधिकांश विद्वान का मानते हैं । नि़ सा रे मं प, मंप ध प, मंपनिसां नि ध प, गमपगमरे इस प्रकार श्याम कल्याण में कल्याण व कामोद मिश्रित होता है व दोनों मध्यमों का प्रयोग सुरूचिपूर्ण रूप से किया जाता है।

छायानट में भी दोनों मध्यमों का प्रयोग किया जाता है–रेगमप म ग म रे, रेगमनिध प, मंप ध प, ध मंप रे, सारे सा। राग कामोद में सा मरे प, मंपधमंप, गमपगमरेसा इस प्रकार दोनों मध्यम् प्रयुक्त होते हैं

राग गौडसारंग वक्र चाल चलता है, इस राग में दोनों मध्यम् इस प्रकार लगते है– नि़सागरे म ग, प रे सा, गरेमग पमं ध प, पध मं प ग म रे सा। अति मधुर राग नंद में भी दोनों मध्यमों का प्रयोग सुगमता से गमधप रे सा, गगम, गमपधनि प ध मं प ग, सगमधप रे सा, इस प्रकार किया जाता है।

मारू बिहाग राग में दोनों मध्यम् व अन्य सभी स्वर शुद्ध है, यह अत्यंत कर्ण प्रिय राग है। नि़ सा ग मं प, मं प ग, मंग मंग सारे सा, रे नि़ सा म ग, गमंपमंप ग, मं ग सा रे सा इस तरह दोनों मध्यम् प्रयोग किए जाते हैं। मारू बिहाग मे यदि शुद्ध मध्यम नही लिया तो 'मार्ग बिहाग' नामक राग का आभास होगा'।

कल्याण अंग के अंर्तगत कुछ अन्य राग ऐसे भी है जिनमें भिन्न–भिन्न स्वर वर्जित होते हुए भी उनमें कल्याण के अंश उद्भूत होते हैं जैसे म व नि पूर्णतः वर्जित राग भूपाली व जैत कल्याण। ''पं0 श्री रामाश्रय झा ने अभिनव गीतांजलि में भूपाली राग का वर्णन करते हुए कहा है कि अगर राग कल्याण के राग वाचक संगतियों में से यदि म–नि स्वर हटा दिए जाए तो राग भूपाली प्रकट होगा''।

जैत कल्याण की उत्पत्ति जैत और कल्याण के मिश्रण से हुई है। इस राग में 'ग प ध प सां व ग प ध प रे, पपसां, परे आदि संगतियों द्वारा कल्याण अंग दृष्टव्य होता है। आरोह मे म–नि वर्जित– राग शुद्ध कल्याण,।

पं0 श्री नारायण लक्ष्मण गुणे ने संगीत प्रवीण दर्शिका में उल्लेख किया है शुद्ध कल्याण में प रे सा की संगति एवं प ग गाते समय मींण में तीव्र मध्यम् के दर्शन कल्याणत्व को स्पष्ट करती है। आरोह में रे–ध वर्जित–मारूबिहाग, मार्ग बिहाग व मालश्री, केवल मध्यम् वर्जित– सावनी कल्याण, केवल अवरोह में

मध्यम् वर्जित– राग चंद्रकांत, गंधार वर्जित–राग सरस्वती कल्याण, रे प वर्जित– राग हिंडोल, आरोह में ऋषभ वर्जित– राग नंद। इस प्रकार उपरोक्त प्रत्येक वर्ग में हमें कल्याण वाचक किसी न किसी स्वर संगति के दर्शन अवश्य होते हैं। राग देवागिरी बिलावल में परेगरेसा/रेगरेसा/निधसां जैसे कल्याण सूचक स्वर संगतियां शुद्ध कल्याण के नाते प्रयोग में आतीं हैं।

राग यमनी बिलावल गाते–बजाते समय मध्य में तीव्र म का प्रयोग पंचम के साथ करके कल्याण दिखाया जाता है व शुद्ध म लगाकर उसका निवारण लिया जाता है जैसे नि रे ग रे सा, प मं प ग म ग रे ग रे सा।

कल्याण अंग के रागों एवं कल्याण के प्रकारों के उत्पत्ति के विषय में भातखण्डे जी का कथन है, कल्याण के प्रकार लगभग 12 माने जाते है, कल्याण में भिन्न–भिन्न राग मिलाकर इनका सृजन होता है। जैसे–कामोद व कल्याण के मिश्रण से राग श्यामकल्याण, कल्याण राग के गंधार वर्जित पुर्वांग में झिंझोटी राग के उत्तरांग के स्वर संगतियों के मिश्रण से सरस्वती राग, कल्याण एवं पूरिया के मिश्रण से पूरिया कल्याण राग का सृजन होता है। इसके अतिरिक्त राग शुद्ध सारंग, राग यमनी बिलावल, राग देवागिरी बिलावल, राग बिहाग, मलुहा केदार, आदि रागों में भी कल्याणत्व अल्प प्रमाण में दृष्टिगत होता है।

''यमनः शुद्ध कल्याणो भूपाली हंमिराहयः।

केदारश्च्छायनाटश्च कामोदः श्यामसंज्ञितः।।

हिंदोलोगौड़सारांगो मालक्षीर्यमनी तथा।

चंद्रकांतादिक एते रागाः कल्याणमेलजाः।।

उपर्युक्त श्लोक में कल्याण मेल के 13 राग बताए गए है–यमन, शुद्ध कल्याण, भूपाली, हमीर, केदार, छायानट, कामोद, श्यामकल्याण, हिंडोल, गौड़सारंग, मालश्री, यमनी बिलावल व चंद्रकांत। विद्वानों के मतानुसार प्राचीन समय में कल्याण अंग के रागों का अत्याधिक प्रचार हुआ। इतना प्रचार किसी और थाट का नही हुआ। ऐसा माना जाता है कि हिंदुओं की ईष्ट वंदना के समय ध्रुवपदों में अधिकतर कल्याण राग का भक्ति रस से 'युक्त स्वरूप' अधिक रचित रहता था क्योंकि प्राचीन काल में 'पुष्टिमार्ग हवेली संगीत' तथा 'देवालय संगीत' पूरे भारतवर्ष में प्रचलित था। आधुनिक समय में भी कल्याण अंग के रागों का अत्यधिक प्रचलन है व संगीतज्ञों एवं श्रोताओं को व आकर्षित आनंदित करने में सक्षम है। अतः कल्याण अंग के अंर्तगत उपस्थित समस्त रागों में कल्याण अंग अवश्य दृष्टिगोचर होते हैं। सभी रागों का आधार एक ही रागांग होते हुए भी प्रत्येक राग दूसरे राग से स्पष्ट रूप से पृथक दिखता है। तीव्र मध्यम जो कि कल्याण का प्रमुख सूचक है एवं विभिन्न स्वर वर्जित होने पर भी कल्याणत्व भिन्न–भिन्न स्वरावलियों द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। राग संगीत भारतीय संगीत की अनुपम परिकल्पना है, जो भारतीय संगीतज्ञों व विद्वानों की परिष्कृत व सुविकसित सूक्ष्म सौंदर्य चेतना का अद्वैत प्रतीक है। राग गायन भारतीय शास्त्रीय संगीत की निजी विशेषता है जो एक अमूल्य संपत्ति है। सम्पूर्ण भारतीय संगीत राग पर ही आधारित है। कल्याण शब्द का शाब्दिक अर्थ मंगलार्थक तो है ही साथ ही संगीत के क्षेत्र में गायन एवं गायकों के लिए कल्याणकारी भी है।

कल्याण रागांग के रागों में शास्त्रीयता के साथ–साथ एक गहन भावनात्मक आकर्षण भी निहित है। यही कारण है कि इन रागों को विलम्बित ख्याल, छोटा ख्याल, तराना, ध्रुपद, धमार और आधुनिक संगीत रूपों में अत्यधिक पसंद किया जाता है।

कल्याण रागांग भारतीय शास्त्रीय संगीत का एक अत्यंत सुविस्तृत, प्रभावशाली और प्रतिष्ठित राग परिवार है। इसके अंतर्गत आने वाले रागों की विविधता, उनकी मधुरता, सौन्दर्य और भावनात्मक व्यापकता संगीत की शास्त्रीय परम्परा को समृद्ध बनाती है। राग यमन, यमनकल्याण, कामोद, नंद, शुद्ध कल्याण जैसे राग न केवल संगीतकारों के कौशल को विकसित करते हैं, बल्कि संगीत–प्रस्तुति को भी अत्यंत सौंदर्यपूर्ण और आत्मीय बनाते हैं।

कल्याण रागांग का अध्ययन संगीत के विद्यार्थी को स्वर–सौंदर्य, राग–विकास और गायन–कौशल का गहन आधार प्रदान करता है, इसलिए यह भारतीय संगीत–शिक्षा का एक अनिवार्य और अविच्छेद्य अंग है।

5.7 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप यह जान चुके हैं कि स्वरलिपि पद्धति के आने के बाद से संगीत सीखना, सुनना एवं सीखाना नितान्त सरल हो गया है। विशेष रूप से विद्यार्थियों को इससे बहुत सहायता प्राप्त हुई है। भातखण्डे जी ने बड़े–बड़े संगीतज्ञों द्वारा जो संगीत सीखा एवं सुना उसे स्वरलिपि पद्धति द्वारा आज लगभग 150 वर्षों से भी अधिक समय तक सुरक्षित रखा है तथा उसका गायन आज सभी संगीत विद्यार्थी कर रहे हैं। स्वरलिपि पद्धति के माध्यम से गायक–वादक तथा संगीत शिक्षक एवं छात्र–छात्राएँ उन रागों एवं गीतों को कंठस्थ करने में सक्षम हैं जिनका अध्ययन वे पहले नहीं कर पाते थे। रागों के अन्तर्गत अनेक गीत रचनाओं को गायन के साथ–साथ स्वरलिपि बद्ध करके हमेशा के लिए आप सुरक्षित रख सकेंगे।

भारतीय संगीत में रागांग वह मूल स्वर संरचना है, जिससे अनेक रागों का स्वभाव और पहचान निर्धारित होती है। यह प्रणाली थाटों की तुलना में अधिक वैज्ञानिक और व्यावहारिक मानी जाती है। कल्याण रागांग, जिसका मुख्य आधार राग यमन है, तीव्र मध्यम तथा प–रे की विशिष्ट संगति से पहचाना जाता है। इस अंग में यमन, यमन कल्याण, केदार, हमीर, नंद, मारू बिहाग आदि प्रमुख राग आते हैं। कल्याण रागांग मधुर, शांत और सायंकालीन भाव उत्पन्न करने वाला माना जाता है। संपूर्ण रूप से रागांग प्रणाली रागों के वास्तविक स्वरूप को समझने का सबसे प्रामाणिक आधार है। साथ ही इस इकाई में आप राग परिचय एवं उनमें लगने वाले विशिष्ट स्वर समुदायों एवं रागांग को भी जान चुके हैं।

5.8 शब्दावली

- **सप्तक** : भारतीय संगीत में सप्तक से अर्थ सात स्वरों के क्रमिक समूह से है। सप्तक तीन प्रकार के होते हैं – मन्द्र, मध्य एवं तार सप्तक। मन्द्र सप्तक में आवाज भारी होती है तथा यह मध्य सप्तक के स्वरों से दुगुने नीचे होता हैं। मध्य सप्तक में स्वरों की आवाज न बहुत ऊँची न बहुत नीची होती है। तार सप्तक के स्वरों की आवाज मन्द्र सप्तक से चौगुनी तथा मध्य सप्तक से दुगुनी ऊँची होती है।
- **थाट** : सात स्वरों का वह समूह जो राग उत्पन्न करने में सक्षम हो थाट या मेल कहलाता है। भातखण्डे जी ने दस थाट बताए हैं जिनका प्रचलन वर्तमान में है। जैसे–भैरव, कल्याण, बिलावल, खमाज़ आदि।

- **जाति** : राग में लगने वाले स्वरों की संख्या के आधार पर राग की जाति निर्भर रहती है। राग में कम से कम पाँच स्वरों तथा अधिकतम सात स्वरों का प्रयोग होता है। सात स्वरों का प्रयोग होने से राग की जाति सम्पूर्ण होती है तथा छः स्वरों के प्रयोग से षाडव एवं पाँच स्वरों के प्रयोग से राग की जाति औडव हो जाती है।
- **पकड़** : राग विशेष में लगने वाला वह छोटा सा स्वर समूह जिससे राग की पहचान तुरन्त हो जाए, पकड़ कहलाता है।
- **वादी–संवादी** : वादी स्वर राग का सबसे प्रमुख स्वर होता है। इसे जीव या अंश स्वर भी कहा जाता है। वादी के अतिरिक्त संवादी स्वर का स्थान दूसरा होता है। उदाहरण के लिए राग रूपी राज्य में 'वादी' स्वर राजा के समान है तो 'संवादी' महामंत्री के समान होता है।
- **उत्तरांग प्रधान** : राग के चलन पर आधारित इस संज्ञा के अनुसार जब राग में मध्य सप्तक एवं तार सप्तक के स्वरों का प्रयोग अधिक होता है तब राग उत्तरांग प्रधान कहलाता है तथा साथ ही मध्य एवं मन्द्र सप्तक में स्वरों के अधिक प्रयोग से राग पूर्वांग प्रधान कहलाता है।

5.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

सत्य/असत्य बताइए :

(क) सत्य **(ख)** असत्य **(ग)** सत्य

संदर्भ सूची–

1. भारतीय संगीत शास्त्र, तुलसी राम देवांगन, पृष्ठ 291, 292
2. संगीत रत्नाकर, कल्लिनाथ (भाग–2) पृष्ठ 15
3. राग दर्पण, फकिरूल्ला (द्वितीय अध्याय) पृष्ठ 62,,
4. भारतीय संगीत शास्त्र– तुलसी राम देवांगन
5. भैरव के प्रकार, जय सुखलाल त्रिभुवन शाह 'विनय' प्रथम संस्करण 1991
6. संगीत की पारिभाषिक शब्दावली, डा0जतिन्द्र सिंह खन्ना पृष्ठ 12
7. राग दर्पण, फकिरूल्ला, (द्वितीय अध्याय) पृष्ठ 78

5.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भातखण्डे, पंडित विष्णु नारायण, (1970), *हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति, क्रमिक पुस्तक मालिका भाग 1 एवं भाग 2, 4* संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. पाठक, पंडित जगदीश नारायण,(1996), *संगीत निबन्ध माला*, पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
3. गोवर्धन, श्रीमती शान्ति, (1995), *संगीत शास्त्र दर्पण भाग–2*, पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
4. झा, पंडित रामाश्रय, (2001), *अभिनव गीतांजली भाग–IV*, संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

5.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र, *राग परिचय भाग 1 तथा 2*, संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र (1993), *मधुर स्वर लिपि संग्रह भाग 1 एवं 2*, संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

5.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. अपने पाठ्क्रम में से किसी एक वर्णित राग में एक ख्याल एवं एक ध्रुवपद की बंदिश को स्वरलिपि बद्ध कीजिए।

इकाई 2– राग भैरव का विस्तृत अध्ययन (आलाप, स्वर विस्तार, विलम्बित ख्याल एवं छोटा ख्याल पूर्ण गायकी सहित, विभिन्न प्रकार की तानें, तराना, ध्रुपद व धमार दुगुन, तिगुन एवं चौगुन लयकारी सहित, भैरव रागांग पर आधारित रागों का ज्ञान)।

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 राग भैरव में ख्याल की बंदिश को लिपिबद्ध करना

2.2.1 राग भैरव का परिचय एवं बंदिश

2.3 राग भैरव में ध्रुवपद एवं धमार की बंदिशें लिपिबद्ध करना

2.3.1 राग भैरव में ध्रुवपद एवं उसकी दुगुन, तिगुन, चौगुन

2.4 भैरव रागांग पर आधारित रागों का ज्ञान

2.5 सारांश

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी.ए. संगीत के पाठ्यक्रम बी0ए0एम0वी0(एन)–350 के छठे सेमेस्टर की दूसरी इकाई है । इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन में राग यमन के विलम्बित ख्याल, छोटा ख्याल एवं ध्रुपद–धमार की बंदिशों एवं गीतों को लिपिबद्ध करना तथा कल्याण रागांग के बारे में समझ चुके होंगे।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप राग भैरव का संरचनात्मक, गायकी प्रधान, लयकारी आधारित तथा रागांग प्रधान विश्लेषण किया गया है। छात्र इस राग की गायकी पद्धति, स्वर विन्यास, तानों के प्रकार, तराना, ध्रुपद–धमार की दुगुन तिगुन चौगुन लयकारी और भैरव अंग से उत्पन्न रागों की विस्तृत समझ विकसित करेंगे। यह अध्ययन विद्यार्थियों को राग भैरव को व्यवहारिक रूप से गाने, समझने तथा प्रस्तुत करने की सम्पूर्ण दक्षता प्रदान करता है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप विभिन्न रागों के स्वरूप एवं गीत रचनाओं को स्वरलिपि बद्ध कर लिखित रूप में उसका ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :–

- रागों में बद्ध रचनाओं को गा कर स्वयं स्वरलिपि बद्ध करने में समर्थ हो सकेंगे। जिससे नवीन रचनाओं को समझा सकेंगे।
- राग भैरव के मूल स्वभाव, समय, परिचय एवं भाव विन्यास को समझ सकेंगे।
- स्वर, विन्यास, वादी, संवादी, पकड़, चलन एवं मींड गमक का शास्त्रीय ज्ञान प्राप्त करेंगे।
- आलाप की विभिन्न शैलीयों विलंबित, मध्य, द्रुत को व्यवहारिक रूप से प्रस्तुत कर सकेंगे।
- विलंबित ख्याल, छोटा ख्याल और उनकी पूर्ण गायकी (आलाप, बोल आलाप, बोल तान, तानें) का अभ्यास कर सकेंगे।
- भैरव में प्रचलित तानों सरल तानें, गमक तानें,, बोल तानें, पहचानकर प्रस्तुत करना सीखेंगे।
- तराना की बुनियादी संरचना, बोलों तथा गतियों को राग भैरव में प्रयुक्त करना समझ सकेंगे।
- ध्रुपद और धमार में भैरव की दुगुन, तिगुन और चौगुन लयकारी का गणित तथा प्रयोग जान सकेंगे।
- भैरव रागांग की संरचना तथा उसी के आधार पर निर्मित रागों जैसे अहिर भैरव, जोगिया, रामकली, भैरव बहार, ललित भैरव आदि का अध्ययन कर सकेंगे।
- राग भैरव की पूर्ण प्रस्तुति के सिद्धांत और व्यवहारिक गायकी में दक्षता प्राप्त करेंगे।

2.4 राग भैरव में ख्याल बंदिशों को लिपिबद्ध करना

2.3.1 राग भैरव का परिचय एवं बंदिश :

थाट	–	भैरव
जाति	–	सम्पूर्ण–सम्पूर्ण
वादी, संवादी	–	धैवत, ऋषभ (ध, रे)
गायन समय	–	प्रातःकाल का प्रथम प्रहर
समप्रकृति राग	–	कलिगड़ा, अहिर भैरव
आरोह	–	सा रे, ग म प, ध, नि सां
अवरोह	–	सां नि ध, प, म ग रे, सा
पकड़	–	ग म$^{नि}$ ध, $^{नि}$ध, प, ग म रे, रे सा

परिचय – राग भैरव रागांग राग है तथा यह आश्रय राग भी है क्योंकि राग एवं थाट का नाम एक ही है। भैरव थाट से अनेक रागों की उत्पत्ति हुई है। सातों स्वर लगने से राग की जाति सम्पूर्ण है। यह उत्तरांग प्रधान राग है क्योंकि इसका मुख्य स्वर धैवत है जो कि वादी स्वर है। यह प्रातःकालीन संधि प्रकाश राग है। भैरव राग शुद्ध राग है इसमें किसी अन्य राग का मिश्रण नहीं है। प्रारम्भिक विद्यार्थियों के लिए यह राग सरल लगता है परन्तु जैसे–जैसे राग की गहराई में जाओ इसकी जटिलता एवं स्वर लगाव का पता चलता है। राग के धैवत एवं ऋषभ स्वर में आन्दोलन होता है।

मुख्य स्वर समूह :

सा^{ग} रे^{ग}रे सा, ध नि़ सा, रे रे सा, ध नि़ सा, सा रे रे ग म मप, प ग म रे ग रे, ग म रे रे सा। ग म$^{नि}$ ध $^{नि}$ध ध प, ग म प ग म रे, ग म ध, ध, प ध नि नि ध ध प, ग म प म रे, रे सा म प$^{नि}$ ध $^{नि}$ध प, ध म प, ग म ध, ध नि ध, सां ध नि ध, ध प, ग म रे सा ।

विलंबित ख़याल– (एकताल)

स्थायी– बिना हरि कौन खबर मोरी लेत।

अन्तरा–काहे को सोच करे मन–मूरख, नित उठि भोजन देत।

												नि़ सा
सा म	–	गम	पप	नि ध	–	प	मप	धधपम	प	म	ग	
ना	ऽ	ऽऽ	हरि	कौ	ऽ	न	ऽऽ	ऽऽऽ	ऽ	ब	ऽ	बि
3		4		×		0		2		0		

रे	,ग	म	प	म	–	ग	म(म)	रे	–	सा	,सा
र	ऽमो	री	ऽ	ले	ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽ	ऽ	त	,बि
3		4		×		0		2		0	

अन्तरा

प	मप	ध	,नि	सां	–	सां	,सां	रें	–	सां	सं
का	ऽऽ	हे	,को	सो	ऽ	च	ऽक	रे	ऽ	म	न
3		4		×		0		2		0	

सां नि	सां	ध	प	प	म	गम	प	प	–	ध	–
का	ऽ	र	ख	नि	त	ऽऽ	उ	ठि	ऽ	भो	ऽ
3		4		×		0		2		0	

–	नि	सां	निसां	रें	–	सां	नि	सां	ध	प	मपधप
ऽ	ज	न	ऽऽ	दे	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	त	ऽ	ऽऽऽवि
3		4		×		0		2		0	

ग म	गम	प	प	नि ध
ना	ऽऽ	ह	रि	कौ
3		4		×

आलाप

कौ	ऽ	सा	–	रे	–	सा	–,	नि़	सा	ध़	प़,	ध़	नि़	सा	बिना	ऽऽ	हरि
×															4		
कौ	ऽ	सा,	रे	सा,	ग	म	–	रे	सा						बिना	ऽऽ	हरि
×															4		
कौ	ऽ	नि़	सा	ग	म	प,	ग	म	ध,	प,	मप	गम	रे	सा	बिना	ऽऽ	हरि
×															4		
कौ	ऽ	प	ग	म	ध	प,	नि	सां	ध	प,	ग	म	रे	सा	बिना	ऽऽ	हरि
×																	

तान

1.	कौ	ऽऽ	नि़सागमपमगरे	सा–नि़सागमपध	पमगरेसा–नि़सा	गमपधनिसांधनि	सांधनिसांधनिसांनि	धपमगरेसा,बिऽ	ना	ऽऽ	हरि
	×		2		0		3		4		
2.	कौ	ऽऽ	नि़सागमपमगम	पधपमगमपध	निसांनिधपमगम	पधनिसांरेंसांनिध	पमगरेसा–नि़सा	गमपधप–बिऽ	ना	ऽऽ	हरि
	×		2		0		3		4		

राग भैरव– मध्यलय ख्याल (तीनताल)

स्थाई–धन धन मूरत कृष्ण मुरारी सुलछन गिरिधारी छवि सुन्दर लागे अति प्यारी

अन्तरा–बंसीधर मन मोहन सुहावे, बलि बलि जाँऊ मोरे मन भावे सबरंग ज्ञान विचारी

स्थाई

ग	म	ध	ध	पम	प	म	ग	रे	–	मग	(म)	रे	–	सा	–
ध	न	ध	न	मूऽ	ऽ	र	त	कृ	ऽ	ष्णऽ	मु	रा	ऽ	री	ऽ
0				3				x				2			
सा	ध़	–	नि़	सा	सा	सा	सा	रे	–	सा	–	नि़	सा	ग	म
सु	ल	ऽ	च्छ	ऽ	न	गि	रि	धा	ऽ	री	ऽ	छ	बि	सूं	ऽ
0				3				x				2			
प	प	ध	–	सां	–	ध	प	पध	निसां	सांरें	सांनि	धनि	धप	मग	म
द	र	ला	ऽ	गे	ऽ	अ	ति	प्याऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	री
0				3				x				2			

अन्तरा

प	–	प	–	ध	ध	नि	नि	सां	सां	सां	सां	नि	सां	सां	–
बं	ऽ	सी	ऽ	ध	र	म	न	मो	ह	न	सु	हा	ऽ	वे	ऽ
0				3				x				2			
रें	रें	मं	मं	रें	–	सां	–	सां	सां	रें	सां	ध	–	प	–
ब	लि	ब	लि	जा	ऽ	ऊँ	ऽ	मो	रे	म	न	भा	ऽ	वे	ऽ
0				3				x				2			

ग	म	ग	म	प	–	ध	प	पध	निसां	सारें	सांनि	धनि	धप	मग	म
स	ब	रं	ग	ज्ञा	ऽ	न	बी	चाऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	री
0				3				x				2			

तानें– आठ मात्रा

सारे	गम	गरे	सरे	गम	पम	गरे	स–
x				2			
सारे	गम	गरे	गम	निध	पम	गरे	सा–
x				2			
सांनि	धप	मग	रेसा	सारे	गम	गम	प–
x				2			
गम	गम	पध	पध	पध	निसां	निध	प–
x				2			
धप	मप	मप	मग	मग	रेसा	गम	प–
x				2			

16 मात्रा की तानें–

सारे	गम	गरे	सारे	गम	पम	गम	गरे
0				3			
सारे	गम	पध	निसां	निध	पम	गरे	सा–
x				2			
साग	मप	मग	रेसा	साग	मप	धप	मप
0				3			
मग	रेसा	साग	मप	धनि	सांनि	धप	मग
x				2			
गम	गम	पध	निनि	धप,	मप	मप	धनि
0				3			
सांनि	धप,	पध	पध	निसां	रेंरें	सांनि	धप
x				2			

भैरव–त्रिताल (मध्यलय) तराना

स्थायी

						ग				नि					
नि	सां	नि	ध	–	प	म	ग	म	ध	–	प	ध	म	प	म
ओ	द	न	तो	ऽ	म्त	न	न	त	दा	ऽ	रे	ता	रे	दा	नि
0				3				x				2			
ग								ग			ग				
म	–	म	रे	ग	म	प	म	म	–	रे	रे	–	सा	सा	सा
दी	ऽ	म्त	न	न	न	न	न	ना	ऽ	रे	ना	ऽ	रे	त	न
0				3				x				2			
म				प											
ग	म	प	प	ग	म	प	ध	नि	सां	नि	ध	प	म	प	ध
नि	ता	ऽ	न्न	तो	ऽ	म्त	दि	या	ना	रे	त	द	रे	त	न
0				3				x				2			

अन्तार

				म		नि	नि	नि	नि						
म	म	प	प	ग	म	ध	ध	ध	ध	नि	नि	सां	सां	सां	सां
य	ल	ल	मु	य	ल	ल	यु	य	लि	य	ल	ल	ल	ल	ल
0				3				x				2			
नि			सां					गं							
ध	ध	ध	नि	सां	नि	सां	सां	रें	–	सा	सां	नि	ध	प	प
य	ल	लि	या	ऽ	ल्ल	ल	ल	ले	ऽ	य	ल	ल	ल	ल	ल
0				3				x				2			
										नि	नि				
रें	सां	–	नि	धध	पप	गग	मम	पप	पप	धध	धध	निनि	सांसां	सां	सां
तक	क्डां	ऽ	तिर	किट	तक	नग	धिर	किट	तक	तक	धिर	किट	तक	तक	ध्डां
0				3				x				2			
मं	रें	सां	–	सां	ध	नि	ध	प	–	म	रे	म	रे	सा	–
ऽ	तक	धा	ऽ	तक	ध्डां	ऽ	तक	धा	ऽ	तक	ध्डां	ऽ	तक	धा	ऽ
0				3				x				2			

2.5 राग भैरव में ध्रुवपद एवं धमार की बंदिशें लिपिबद्ध करना

2.4.1 राग भैरव में ध्रुवपद एवं उसकी दुगुन :

राग भैरव – चौताल

स्थाई – शीश जटा गंग सोहे बाल चन्द्र सोहे भाल।
गले सोहे ब्याल माल कर त्रिशुल धारी।।

अन्तरा – भष्म अंग संग सोहे गौरी गणपति गणेश।
कटि लपेटे ब्याघ्र छाल डमरू कर धारी।।

स्थाई

ध	–	नि	सां	सां	–	रें	–	सां	ध	–	प
सी	ऽ	स	ज	टा	ऽ	गं	ऽ	ग	सो	ऽ	हे
X		0		2		0		3		4	
प	ग	म	ध	–	प	प	ग	म	रे	–	सा
बा	ऽ	ल	चं	ऽ	द्र	सो	ऽ	हे	भा	ऽ	ल
X		0		2		0		3		4	
ध	ध	सा	रे	ग	म	प	ग	म	ध	–	प
ग	ले	ऽ	सो	ऽ	हे	ब्या	ऽ	ल	मा	ऽ	ल
X		0		2		0		3		4	
ध	नि	सां	ध	–	प	म	ग	म	रे	–	सा
क	र	त्रि	सू	ऽ	ल	धा	ऽ	ऽ	री	ऽ	ऽ
X		0		2		0		3		4	

अन्तरा

म	–	प	ध	–	नि	सां	–	सां	रें	–	सां
भ	ऽ	स्म	अं	ऽ	ग	सं	ऽ	ग	सो	ऽ	हे
ध	–	नि	सां	सां	सां	रें	गं	मं	रें	–	सां
गौ	ऽ	री	ऽ	ग	ण	प	ति	ग	णे	ऽ	श
प	ग	म	ध	–	प	सां	–	सां	रें	–	सां
क	टि	ल	पे	ऽ	टे	ब्या	ऽ	घ्र	छा	ऽ	ल
ग	म	ध	ध	–	प	म	ग	म	रे	–	सा
ड	म	रू	क	ऽ	र	धा	ऽ	ऽ	री	ऽ	ऽ
X		0		2		0		3		4	

राग भैरव (ध्रुवपद की दुगुन)

स्थाई

ध	–	नि	सां	सां	–	रें	–	सां	ध	–	प
सी	ऽ	स	ज	टा	ऽ	गं	ऽ	ग	सो	ऽ	हे
X				0				2			
प	ग	म	ध	–	प	प	ग	म	रे	–	सा
बा	ऽ	ल	चं	ऽ	द्र	सो	ऽ	हे	भा	ऽ	ल
0				3				4			
ध	ध	सा	रे	ग	म	प	ग	म	ध	–	प
ग	ले	ऽ	सो	ऽ	हे	ब्या	ऽ	ल	मा	ऽ	ल
X				0				2			
ध	नि	सां	ध	–	प	म	ग	म	रे	–	सा
क	र	त्रि	सू	ऽ	ल	धा	ऽ	ऽ	री	ऽ	ऽ
0				3				4			

तिगुन–

ध	–	नि	सां	सां	–	रें	–	सां	ध	–	प
सी	ऽ	स	ज	टा	ऽ	गं	ऽ	ग	सो	ऽ	हे
3						4					
प	ग	म	ध	–	प	प	ग	म	रे	–	सा
बा	ऽ	ल	चं	ऽ	द्र	सो	ऽ	हे	भा	ऽ	ल
X						0					
ध	ध	सा	रे	ग	म	प	ग	म	ध	–	प
ग	ले	ऽ	सो	ऽ	हे	ब्या	ऽ	ल	मा	ऽ	ल
2						0					
ध	नि	सां	ध	–	प	म	ग	म	रे	–	सा
क	र	त्रि	सू	ऽ	ल	धा	ऽ	ऽ	री	ऽ	ऽ
3						4					

चौगुन–

ध	–	नि	सां	सां	–	रें	–	सां	ध	–	प
सी	ऽ	स	ज	टा	ऽ	गं	ऽ	ग	सो	ऽ	हे
X								0			
प	ग	म	ध	–	प	प	ग	म	रे	–	सा
बा	ऽ	ल	चं	ऽ	द्र	सो	ऽ	हे	भा	ऽ	ल
				2							
ध	ध	सा	रे	ग	म	प	ग	म	ध	–	प
ग	ले	ऽ	सो	ऽ	हे	ब्या	ऽ	ल	मा	ऽ	ल
0								3			
ध	नि	सां	ध	–	प	म	ग	म	रे	–	सा
क	र	त्रि	सू	ऽ	ल	धा	ऽ	ऽ	री	ऽ	ऽ
				4							

अन्तरा– दुगुन

म	–	प	ध	–	नि	सां	–	सां	रें	–	सां
भ	ऽ	स्म	अं	ऽ	ग	सं	ऽ	ग	सो	ऽ	हे
X				0				2			
ध	–	नि	सां	सां	सां	रें	गं	मं	रें	–	सां
गौ	ऽ	री	ऽ	ग	ण	प	ति	ग	णे	ऽ	श
0				3				4			
प	ग	म	ध	–	प	सां	–	सां	रें	–	सां
क	टि	ल	पे	ऽ	टे	ब्या	ऽ	घ्र	छा	ऽ	ल
X				0				2			
ग	म	ध	ध	–	प	म	ग	म	रे	–	सा
ड	म	रू	क	ऽ	र	धा	ऽ	ऽ	री	ऽ	ऽ
0				3				4			

तिगुन–

म	–	प	ध	–	नि	सां	–	सां	रें	–	सां
भ	ऽ	स्म	अं	ऽ	ग	सं	ऽ	ग	सो	ऽ	हे
3						4					
ध	–	नि	सां	सां	सां	रें	गं	मं	रें	–	सां
गौ	ऽ	री	ऽ	ग	ण	प	ति	ग	णे	ऽ	श
X						0					
प	ग	म	ध	–	प	सां	–	सां	रें	–	सां
क	टि	ल	पे	ऽ	टे	ब्या	ऽ	घ्र	छा	ऽ	ल
2						0					
ग	म	ध	ध	–	प	म	ग	म	रे	–	सा
ड	म	रू	क	ऽ	र	धा	ऽ	ऽ	री	ऽ	ऽ
3						4					

चौगुन–

म	–	प	ध	–	नि	सां	–	सां	रें	–	सां
भ	ऽ	स्म	अं	ऽ	ग	सं	ऽ	ग	सो	ऽ	हे
X								0			
ध	–	नि	सां	सां	सां	रें	गं	मं	रें	–	सां
गौ	ऽ	री	ऽ	ग	ण	प	ति	ग	णे	ऽ	श
				2							
प	ग	म	ध	–	प	सां	–	सां	रें	–	सां
क	टि	ल	पे	ऽ	टे	ब्या	ऽ	घ्र	छा	ऽ	ल
0								3			
ग	म	ध	ध	–	प	म	ग	म	रे	–	सा
ड	म	रू	क	ऽ	र	धा	ऽ	ऽ	री	ऽ	ऽ
				4							

भैरव– धमार (विलंबित)

स्थाई

ग				सा						ग		नि		
रे	–	सा	सा	ध	सा	–	म	–	–	म	गम	ध	–	
आ	ऽ	ज	र	स	मा	ऽ	ते	ऽ	ऽ	हो	ऽऽ	री	ऽ	
0			3				X					2		

										ग				
प	म	ग	म	–	ग	म	म	रे	–	रे	–	सा	–	
खे	ऽ	ऽ	ले	ऽ	ऽ	ऽ	ला	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ल	ऽ	
0			3				X					2		

रे	–	सा	
आ	ऽ	ज	
0		3	X

2

अन्तरा–

			नि			सां				सां				
प	–	मप	ध	–	–	नि	सां	–	–	नि	सां	सां	सां	
ता	ऽ	ऽऽ	री	ऽ	ऽ	दै	दै	ऽ	ऽ	ना	ऽ	च	त	
X					2		0			3				
नि												नि		
ध	–	–	नि	सां	सां	सां	रें	–	सां	नि	सां	ध	प	
गा	ऽ	ऽ	व	त	सँ	ग	ग्वा	ऽ	ऽ	ऽ	ल	ब्र	ज	
X					2		0			3				
ध					म		ग							
सां	ध	प	ग	मग	रे	सा	रे	–	सा					
बा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽ	ल	आ	ऽ	ज					
X					2		0			3				

भैरव– धमार (विलंबित) स्थाई– दुगुन

	ग				सा						ग		नि	
1	रे	–	सा	सा	ध	सा	–	म	–	–	म	गम	ध	
1	आ	ऽ	ज	र	स	मा	ऽ	ते	ऽ	ऽ	हो	ऽऽ	री	
3								X						

										ग				
–	प	म	ग	म	–	ग	म	म	रे	–	रे	–	सा	
ऽ	खे	ऽ	ऽ	ले	ऽ	ऽ	ऽ	ला	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ल	
				2				0						

–	रे	–	सा	सा	ध	सा	–	म
ऽ	आ	ऽ	ज	र	स	मा	ऽ	ते
3								X

भैरव– धमार (विलंबित) स्थाई– तिगुन (3.5, तीसरी मात्रा से प्रारम्भ)

		ग				सा						ग
1		रे	–	सा	सा	ध़	सा	–	म	–	–	म
1		आ	ऽ	ज	र	स	मा	ऽ	ते	ऽ	ऽ	हो
										2		
		नि										
गम		ध़	–	प	म	ग	म	–	ग	म	म	रे
ऽऽ		री	ऽ	खे	ऽ	ऽ	ले	ऽ	ऽ	ऽ	ला	ऽ
				0								
		ग							सा			
–		रे	–	सा	–	रे	–	सा	सा	ध़	सा	–	म
ऽ		ऽ	ऽ	ल	ऽ	आ	ऽ	ज	र	स	मा	ऽ	ते
3												X

भैरव– धमार (विलंबित) स्थाई– चौगुन (दुसरी ताली, छठी मात्रा से प्रारम्भ)

		ग				सा						ग
1		रे	–	सा	सा	ध़	सा	–	म	–	–	म
1		आ	ऽ	ज	र	स	मा	ऽ	ते	ऽ	ऽ	हो
2									0			
		नि										
गम		ध़	–	प	म	ग	म	–	ग	म	म	रे
ऽऽ		री	ऽ	खे	ऽ	ऽ	ले	ऽ	ऽ	ऽ	ला	ऽ
									3			
		ग							सा			
–		रे	–	सा	–	रे	–	सा	सा	ध़	सा	–	म
ऽ		ऽ	ऽ	ल	ऽ	आ	ऽ	ज	र	स	मा	ऽ	ते
												X

भैरव– धमार (विलंबित) अन्तरा– दुगुन आठवीं मात्र, पहली खली से प्रारम्भ

				नि		सां				सां		
प	–	मप	ध़	–	–	नि	सां	–	–	नि	सां	सां	सां
ता	ऽ	ऽऽ	री	ऽ	ऽ	दै	दै	ऽ	ऽ	ना	ऽ	च	त
0						3							
नि											नि	
ध़	–	–	नि	सां	सां	सां	रें	–	सां	नि	सां	ध़	प
गा	ऽ	ऽ	व	त	सँ	ग	ग्वा	ऽ	ऽ	ऽ	ल	ब्र	ज
X										2			
ध़					म		ग				सा		
सां	ध़	प	ग	मग	रे	सा	रे	–	सा	सा	ध़	सा	–	प
बा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽ	ल	आ	ऽ	ज	र	स	मा	ऽ	ता
0						3								X

भैरव– धमार (विलंबित) अन्तरा– तिगुन– पहली मात्रा, सम से प्रारम्भ

			नि			सां				सां				नि
प	–	मप	ध	–	–	नि	सां	–	–	नि	सां	सां	सां	ध
ता	ऽ	ऽऽ	री	ऽ	ऽ	दै	दै	ऽ	ऽ	ना	ऽ	च	त	गा
X														

											नि		ध	
–	–	नि	सां	सां	सां	रें	–	सां	नि	सां	ध	प	सां	ध
ऽ	ऽ	व	त	सँ	ग	ग्वा	ऽ	ऽ	ऽ	ल	ब्र	ज	बा	ऽ
2						0								

			म		ग				सा			
प	ग	मग	रे	सा	रे	–	सा	सा	ध	सा	–	प
ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽ	ल	आ	ऽ	ज	र	स	मा	ऽ	ता
3												X

भैरव– धमार (विलंबित) अन्तरा– चौगुन– चौथी मात्रा से प्रारम्भ

					नि			सां				सां		
1	2	प	–	मप	ध	–	–	नि	सां	–	–	नि	सां	सां	सां
1	2	ता	ऽ	ऽऽ	री	ऽ	ऽ	दै	दै	ऽ	ऽ	ना	ऽ	च	त
								2							

नि												नि		ध
ध	–	–	नि	सां	सां	सां	रें	–	सां	नि	सां	ध	प	सां	ध
गा	ऽ	ऽ	व	त	सँ	ग	ग्वा	ऽ	ऽ	ऽ	ल	ब्र	ज	बा	ऽ
0												3			

			म		ग				सा			
प	ग	मग	रे	सा	रे	–	सा	सा	ध	सा	–	प
ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽ	ल	आ	ऽ	ज	र	स	मा	ऽ	ता
												X

2.4 भैरव रागांग पर आधारित रागों का ज्ञान

भैरव भारतीय संगीत का एक बहुत प्राचीन और प्रसिद्ध राग है। हमारे संगीत के पुराने ग्रंथों में भैरव राग का उल्लेख मिलता है। भगवान शिव (नटराज) का भारतीय संगीत से प्राचीन काल से ही गहरा संबंध माना गया है। संगीत के विकास में नारद, भरत मुनि और कोहल जैसे महान आचार्यों का बहुत बड़ा योगदान रहा है। संगीत शास्त्र की उन्नति में इनका विशेष स्थान है। इन आचार्यों के अनुसार संगीत शास्त्र के प्रथम प्रवर्तक भगवान शिव हैं, जिनका एक स्वरूप 'भैरव' माना गया है।

प्राचीन काल से लेकर आज तक भैरव राग के स्वरूप को लेकर कुछ मतभेद हो सकते हैं, लेकिन सभी संगीत परंपराओं में यह राग विद्वानों का प्रिय रहा है। अभ्यास (तालिम) और प्रातःकालीन रियाज़ के लिए भैरव राग का भारतीय संगीत में विशेष महत्व है। भगवान शिव से जुड़े होने के कारण भैरव को 'आदि राग' भी कहा जाता है और इसकी परंपरा प्राचीन समय से आज तक लगातार चली आ रही है।

प्राचीन भारत में भैरव के बारह प्रकार माने गए हैं, जो भगवान शिव के बारह रुद्र रूपों से जुड़े हैं। ये प्रकार हैं शुद्ध भैरव, आनंद भैरव, आदि भैरव, सौराष्ट्र भैरव, उन्मत्त भैरव, जालंधर भैरव, बंगाल भैरव, प्रभात भैरव, शिवमत भैरव और मंगल भैरव।

नारद द्वारा रचित 'संगीत मकरंद' ग्रंथ में सबसे पहले राग–रागिनियों का उल्लेख मिलता है।

प्राचीन संगीत ग्रंथों में रागों का वर्गीकरण पुरुष राग और स्त्री राग के रूप में किया गया है। यहीं से रागों के वर्गीकरण की परंपरा की शुरुआत मानी जाती है। इसी काल में छह मूल रागों के विषय में विभिन्न मत सामने आए। इनमें प्रमुख मत हैं– शिवमत, कृष्णमत, भरत मुनि का मत और हनुमान मत। इन मतों के अनुसार वर्ष की छह ऋतुओं में छह भिन्न–भिन्न रागों के गायन का नियम बताया गया है। इन चारों मतों में आपसी समानता कम और मतभेद अधिक दिखाई देते हैं। भैरव मत को छोड़कर अन्य सभी मूल रागों के विषय में विद्वानों के बीच पर्याप्त मतभेद पाए जाते हैं। इसके बावजूद भैरव राग को सभी मतों में विशेष और महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। शिवमत और कृष्णमत के अनुसार भैरव राग का संबंध शिशिर ऋतु से माना गया है, जबकि भरत मुनि और हनुमान मत के अनुसार भैरव का गायन ग्रीष्म ऋतु में किया जाना चाहिए।[1]

'भैरव' शब्द का अर्थ चंद्र, भयानक, विकट अथवा रौद्र भाव से जुड़ा माना जाता है। इसी कारण इस राग का नाम 'भैरव' पड़ा होगा।

भैरव राग के उद्‌गम और विकास के संदर्भ में शब्दचंद्र पंजाबी द्वारा रचित ग्रंथ 'संगीत का आदि राग भैरव उद्‌गम और उत्क्रांति' में महत्वपूर्ण विचार प्रस्तुत किए गए हैं। लेखक के अनुसार संगीत रत्नाकर में वर्णित भैरव राग रे और धैवत स्वर के वर्जन के कारण औढ़व स्वरूप में था, जो आधुनिक भैरव से काफी मिलता–जुलता प्रतीत होता है। संगीत दर्पण ग्रंथ में कोमल निषाद के स्थान पर तीव्र निषाद का प्रयोग बताया गया है, जो आधुनिक औढ़व राग 'चंद्रकौंस' की याद दिलाता है।

इसके बाद संगीत परिजात (15वीं शताब्दी) में भैरव राग में तीव्र गंधार और तीव्र निषाद जोड़े गए तथा पंचम स्वर को वर्जित कर 'वसंत भैरव' और षाडव भैरव की कल्पना की गई। समय के साथ पंचम स्वर को पुनः सम्मिलित कर आधुनिक भैरव राग का संपूर्ण स्वरूप विकसित हुआ।[2]

भैरव अंग के रागों की सूची निम्नलिखित है। ये राग स्वर की दृष्टि से हिन्दुस्तानी दस थाटों में किसी भी थाट के अन्तर्गत नहीं आते हैं। कालिंगड़ा, जोगिया, गुणक्री, गौरी, शिवमत भैरव, रामकली, अहीर भैरव, प्रभात भैरव, मंगल भैरव, शोभावरी, अहीर भैरव, आनंद भैरव, नट भैरव, तिलंग भैरव, कोसी भैरव, नंद भैरव, बसंत भैरव, भैरव बहार, शिवमत भैरव, दुर्गा भैरव, बेरागी भैरव, जैनपुरी भैरव, गौरी भैरव, माड़ भैरव, देवता भैरव, कबीर भैरव, ललित भैरव, आनंदी भैरव, कलिंगड़ा भैरव, बिलासखानी भैरव, श्री भैरव, सरस्वती भैरव, पीतांबर भैरव, भैरव मटियार आदि रागों को अंग–विशेष के आधार पर उन्हें भैरव अंग के अन्तर्गत रखा गया है।

राग भैरव– इस राग कि उत्पत्ति भैरव थाट से मानी गई है और इसकी जाति संपूर्ण है। इस राग का वादी स्वर धैवत और संवादी ऋषभ माना गया है। अन्य मतानुसार पंचम को भी वादी माना गया है। इस राग में दोनों मध्यमों का प्रयोग किया जाता है परंतु शुद्ध मध्यम का प्रयोग मुख्यरूप से किया जाता है। आंदोलित ऋषभ और धैवत भैरव रागांग सूचक है। इस राग में दोनों निषादों का प्रयोग किया जाता है।

राग भैरव का स्वर विस्तार एवं भैरव रागांग का विश्लेषण

स्वर विस्तार (पं. भातखंडे, हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति)

सा, रे रे, सा ध़, सा रे, सा म ग रे, सा, सा रे सा।

ध़ ध़ नि़ सा, सा ध़, सा, म ग रे, ग रे, रे सा, सा रे सा।

सा रे सा, नि़ सा, ध़, नि़ ध़ नि़ सा, ग म ग रे, प म ग रे सा,

सा रे सा। नि़ सा रे रे सा, रे सा ध़, नि़ ध़ प, म प ध़, रे सा सा रे सा।

म ग रे सा, सा रे सा ध़, रे सा ध़, नि़ ध़, सा, ग म ग रे, सा,

सा रे सा।

सा, म ग, म प, ध़, प म ग रे, ग म ग रे, सा, नि़ सा ध़, नि़ सा,

रे सा, ग रे, म ग रे, प म ग रे, रे सा, ध़ प, म प म ग रे, सा, सा

रे सा।

प, प प ध़, नि सां, सां रे, सां, सां ध़, नि सां, रे रे सां, नि ध़, रें सां

नि ध़, नि ध़ प, म ग म प ध़ गं मं गं सां, नि ध़ प, सां नि ध़

प, म ग रे, ग म प म ग रे, रे सा, सा रे सा।

सा सा, म ग म प, ध़ ध़ प, म प म ग, रे, प म ग रे, सा, सा रे

सा।

सा नि॒ ध॒ प, ध॒ प, म प, ध॒ ध॒ प, नि॒ सा, म ग रे॒, प म ग

रे॒, रे॒ सा, सा रे॒ सा।

म ग म प, ध॒ ध॒, नि ध॒ प, सा नि ध॒ प, रे॒ सा नि ध॒ प, म प म ग

रे॒, प म ग रे॒ सा, सा रे॒ सा।

म ग रे सा, ग रे सा, रे सा, ध ध, नि ध, सा, म ग म, ध प, म

ग रे, सा, सा रे सा।

ध॒ ध॒ प, प प, सां नि ध॒ प, रे॒ सां नि ध॒ प, नि ध॒ प, म प ध॒ प म

ग रे॒, प म ग रे॒ सा, सा रे॒ सा

विश्लेषण

इस स्वर विस्तार में प्रारंभ में राग के पूर्वांग का स्वरूप स्पष्ट किया गया है। मंद्र सप्तक में राग का विस्तार किया गया है। सा–रे की स्वर संगति में आंदोलित ऋषभ द्वारा पूर्वांग में भैरव के रागांग को स्थापित किया गया है। प म ग रे॒ साकृइस प्रकार ऋषभ का अवरोही प्रयोग दिखाई देता है। म ग, म प ध॒, प म ग रे॒–इन स्वर संगतियों से उत्तरांग में धैवत के प्रयोग द्वारा वादी स्वर का महत्व एवं भैरव रागांग को स्पष्ट किया गया है। उत्तरांग में राग वाचक विभिन्न स्वर संगतियों द्वारा राग का स्वरूप बताया गया है। नि ध॒ प के द्वारा कोमल निषाद का अल्प प्रयोग भी दिखाई देता है।

मुख्य रूप से इस स्वर विस्तार में निम्न प्रकार की स्वर संगतियों का प्रयोग दिखाई देता है–

(1) सा रे॒ सा

(2) सा ध॒

(3) नि॒ ध॒ नि॒ सा

(4) ग म ग रे॒

(5) प म ग रे॒

(6) म प ध॒

(7) सा म ग

(8) ध॒ प प

(9) नि ध॒ प

(10) सां नि ध॒ प

(11) प प ध़ नि सां

इन सभी स्वर संगतियों के साथ पूर्वांग में भैरव का रागांग को उद्घाटित करने के लिए सा का प्रयोग किया गया है।

राग रामकली–

रामकली यह प्राचीन राग माना गया है। राग रामकली की निर्मिति भैरव थाट से मानी गई है। इसमें शुद्ध मध्यम और कोमल निषाद का प्रयोग करने से तथा आरोह में ऋषभ का अल्पत्व कर दी गई है। यह उत्तरांग प्रधान एवं संपूर्ण–संपूर्ण जाति का राग है। इसमें धैवत वादी तथा ऋषभ संवादी है। कई विद्वान इसमें पंचम व षड्ज स्वर को वादी–संवादी मानते हैं। राग में रे कोमल, दोनों मध्यम और निषाद प्रयुक्त होते हैं एवं शेष स्वर शुद्ध लगते हैं। इसका गायन समय प्रातःकाल है।

इस राग की उत्पत्ति भैरव थाट से मानी गई है और इसकी जाति संपूर्ण है। इस राग का वादी स्वर धैवत और संवादी ऋषभ माना गया है। मतानुसार पंचम को भी वादी माना गया है। इस राग में दोनों मध्यमों का प्रयोग किया जाता है, परंतु शुद्ध मध्यम का प्रयोग मुख्य रूप से किया जाता है। आंदोलित ऋषभ और धैवत भैरव रागांग सूचक हैं। इस राग में दोनों निषादों का प्रयोग किया जाता है।

मं प ध़ नि ध़ प यह रामकली की रागवाचक स्वर संगति है। भैरव राग मंद्र और मध्य सप्तक में अधिक गाया जाता है और रामकली मध्य और तार सप्तक में अधिक गाया जाता है। राग लक्षण ग्रंथ में रामकली का उल्लेख प्राप्त होता है जिसमें आरोह में मध्यम निषाद वर्ज्य है। हृदयकौतुक ग्रंथ में रामकरी राग का उल्लेख प्राप्त है जिसे गौरी थाट (पूर्वी थाट) से उत्पन्न माना गया है।

राग रामकली का स्वर विस्तार एवं रागांग भैरव का विश्लेषण–

स्वर विस्तार (पं. भातखंडे, हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति)

सा, म ग म प, ध़ प, ग म रे़ सा, ध़ प, मं प, ग म प, ग म रे़ सा, प ध़ प

सा, रे़ रे़ सा, ग म रे़ सा, ध़ प मं प, ग म रे़, ग म रे़ सा, ध़ ध़ प

सा, ध़ नि़ सा, रे़ सा, ग म ध़ ध़ प, मं प, ग म, नि ध़ प, ग म रे़ सा, ग म ध़, प

सा म, ग म, ग म प, मं प, प ध़ नि़ ध़ प, ग म, सां नि ध़, प म प, ग म रे़ सा, ध़, प

म, ग, म, ध़, प मं प, म ग रे़ सा, सा म, ग म, ध़ ध़ प मं प, ग म ग म रे़ सा, सा,

नि़ सा, ध़ नि़ सा, सा, म, ग म, ग म प, ध़ नि़ ध प, ग म रे़ सा

ध़, प प, प प प, ध़ ध़, नि सां, नि सां, प ध़, नि सां, रें़ सां, नि सां, नि ध़ प, मं प,

ध़ ध़ प मं प, ग म, ध़ प, सां, नि ध़ प, मं प ध़ नि़ ध़ प, ग म रे़ सा

ध़, प, सा, रे सा, ग म, म प, प ध़ प मं प, ग म, नि ध़ प, ग म रे़, सा, ध़ नि़ सा रे़,

नि़ सा, ग म रे़ सा, ध़ प

विश्लेषण–

इस राग में भैरव के समान उतने प्रमाण में रे़ और ध़ आंदोलित नहीं हैं। परंतु भैरव रागांग स्पष्ट करने वाली स्वर संगतियों का प्रयोग इसमें दिखाई देता है। स्वर विस्तार के आरंभ में ग म प ध़, प इस

क्रम में कोमल धैवत का प्रयोग भैरव रागांग के अनुसार किया गया है। ग म रे सा यह स्वर संगति भी कोमल ऋषभ के प्रयोग द्वारा राग के पूर्वांग में भैरव रागांग को स्पष्ट करती है। इस प्रकार रे रे सा, ग म रे सा, ग म ध ध, ध प इन स्वर संगतियों का प्रयोग उपर्युक्त स्वर विस्तार में किया गया है, जो भैरव रागांग सूचक है।

भैरव के रागांग वाचक स्वर संगतियों के साथ पंचम का बहुल, तीव्र मध्यम और कोमल निषाद के प्रयोग के द्वारा रामकली का स्वरूप स्पष्ट होता है। इस राग की चंचल प्रकृति भैरव की गंभीर प्रकृति के विपरीत है। इस प्रकार मुख्य रागांग को अपनी विशिष्ट स्वर संगतियों के साथ मिश्रित करते हुए रामकली का एक संपूर्ण स्वरूप इस विस्तार से स्पष्ट होता है।

राग अहीर भैरव

राग अहीर भैरव भैरव अंग का भैरव और काफी मिश्रित राग है। भैरव का प्रकार होने और भैरव अंग विशेष महत्वपूर्ण होने से यह भैरव थाट के अन्तर्गत रखा गया है। यह अत्यन्त प्रचलित राग है। इसके पूर्वांग में भैरव और उत्तरांग में काफी राग से पूर्वांग में शुद्ध गंधार के साथ कोमल ऋषभ भैरव का तथा उत्तरांग में शुद्ध धैवत के साथ कोमल निषाद काफी राग का सूचक है। इसमें ऋषभ निषाद कोमल शेष स्वर शुद्ध लगते हैं। मध्यम वादी, षड्ज संवादी है। कुछ विद्वान षड्ज–पंचम तथा षड्ज–मध्यम वादी–संवादी मानते हैं परन्तु मध्यम–षड्ज वादी–संवादी अधिकांश विद्वानों द्वारा मान्य है। आरोह–अवरोह में सातों स्वरों का प्रयोग होने से इसकी जाति सम्पूर्ण है। गायन समय प्रातःकाल है। इसमें मध्यम स्वर का बड़ा ही महत्व है। इस पर विश्राम बड़ी ही मधुर लगती है और इस पर बार–बार ठहराव होता है। इसमें ध़ नि़ रे़ ये स्वर–समूह राग वाचक के रूप में इतना के प्रयोग से अहीर भैरव स्पष्ट हो जाता है।

आरोह– सा रे़ ग म प ध नि़ सां

अवरोह– सां नि़ ध प म ग रे़ सा

पकड़– सा ध़ नि़ रे ग म प ध प म ग रे़ सा

अहीर भैरव का स्वर विस्तार

सा, ध़ ध़ नि़ रे सा, नि़ ध़ प़ म़, प़ ध़ नि़ रे़, सा ।

सा, रे़ ग म, म ग रे़, ग म, प म, ग म म ध प म, म ग रे़ ऽ सा। ग म म प ध नि़ सां ।

म रे़ ग म, सा रे़ ग म, प ध नि़ ध, प म, ग म रे़, म, म प ध, म नि़ सां प ध नि़ सां, प ध नि़ सां ध म, प ध नि़ रें़, रें़ सां, नि़ सां, नि़ ध नि़ रें, नि़ सां नि़ ध, प ध नि़ म प प म, ग म ग रे़, रे़ सा।

सा रे़ ग म, प ध नि़ सां, ध नि़ रें़ सां, रें़ नि़ ध, म, प ध, म प ध नि़ सां, रें़, रें़ गं मं, सां, रें़ गं मं, गं मं गं रें़, नि़ सां, नि़ सां ध नि़ प ध म प, ग म रे़ ऽ सा।

राग बैरागी भैरव

यह राग हाल में प्रचार में आया है। इसे बैरागी भी कहा जाता है। इसमें गंधार धैवत वर्ज्य हैं तथा ऋषभ निषाद कोमल व स्वर शुद्ध हैं। भैरव अंग महत्वपूर्ण होने से गुणिजन इसे भैरव थाट जन्य मानते हैं। स्वर की दृष्टि से यह राग भैरवी थाट के अंतर्गत आना चाहिए किंतु इसका स्वरूप भैरव थाट होने का आभास करा रहा है इसलिए भैरव थाट जन्य मानना ही उपयुक्त है। वादी मध्यम संवादी षड्ज है। कुछ गुणिजन पंचम वादी मानते हैं। जाति औड़व–औड़व तथा गायन समय प्रातः काल है। ऋषभ आंदोलित है और इस पर बार–बार न्यास होता है जो भैरव का आभास कराता है। निषाद स्वर जोरदार है। सारंग राग में ऋषभ निषाद कोमल कर देने से इस राग की रचना होती है। पूर्वांग में भैरव और उत्तरांग में सारंग है।

सा, रे, म, प, म, रे, सा सा जोगिया तथा गुणक्री की छाया आती है किंतु धैवत वर्ज्य व निषाद कोमल होने से यह शंका मिट जाती है। म, प, नि, प, सा, नि, प, नि सा से सारंग अंग झलकता है। नि सा रे म, प म रे, नि म प रे, सा रे म प नि प म, प नि सा, नि प नि सा, नि प म, रे सा इत्यादि स्वर संगतियाँ रागवाचक हैं।

आरोह– सा रे, म, प, नि सां

अवरोह– सां नि, प, म रे सा

पकड़– म प, म नि प, म रे, नि रे, सा

राग बैरागी भैरव का स्वर विस्तार

सा, नि, सा नि प, नि सा रे सा ।

नि सा रे, म, म रे, सा रे म, प, म प रे, म रे सा ।

सा, रे नि सा रे म, नि, प म, नि प, म रे प म, प रे, सा रे म प नि सां, नि प म, रे, म प, सा रे म प, म, नि प, म प नि सां, रें सां नि प, म प नि प, म रे सा ।

म, प म रे म, प नि, म प नि सां रें सां नि रें सां रें मं रें पं पं रें, सां नि सां नि प, नि प, सां नि प, म, नि प म रे म, म रे सा ।

इस विश्लेषण के आधार पर हम यह जान चुके हैं कि मुख्य रूप से ग म रे सा और ग म ध ध प इन स्वर संगतियों द्वारा भैरव रागांग स्पष्ट होता है। इन स्वर संगतियों में ऋषभ व धैवत का आंदोलित स्वर लगाव महत्वपूर्ण है। आंदोलित धैवत के प्रयोग के समय आरोही चलन में धैवत कोमल निषाद के कण से आंदोलित होता है और अवरोही चलन में शुद्ध निषाद की सहायता से आंदोलित होता है, ऐसा कहा है। अन्य रागों में भैरव रागांग का पूर्वांग और उत्तरांग में प्रयोग निम्न रूप से है–

नट भैरव– उत्तरांग में ग म ध प।

बसंत मुखारी– पूर्वांग में ग म रे सा।

प्रभात भैरव– पूर्वांग और उत्तरांग दोनों में रागांग भैरव का प्रयोग।

बंगाल भैरव– पूर्वांग और उत्तरांग दोनों में रागांग भैरव का प्रयोग।

शिवमत भैरव– पूर्वांग और उत्तरांग दोनों में रागांग भैरव का प्रयोग।

गुणक्री– पूर्वांग में म रे सा की मींड गंधार का स्पर्श करते हुए और उत्तरांग में धैवत का प्रयोग।

आनंद भैरव– आगरा घराने की परम्परा के अनुसार इसमें दोनों धैवत एवं कोमल ऋषभ का प्रयोग किया जाता है। भैरव रागांग का पूर्वांग और उत्तरांग दोनों में प्रयोग।

सौराष्ट्र भैरव– पूर्वांग और उत्तरांग दोनों में भैरव रागांग का प्रयोग।

विभास– भैरव रागांग का सीधा प्रयोग नहीं होता है, परन्तु सूक्ष्म रूप से ध ध प और ग रे सा इन स्वर संगतियों से भैरव के साथ आंशिक संबंध स्थापित कर सकते हैं। इसमें ऋषभ व धैवत आंदोलित नहीं होते।

भैरव बहार– पूर्वांग में भैरव रागांग का प्रयोग।

कालिंगड़ा– भैरव थाट के स्वर होते हुए भी चलन भेद और स्वर लगाव भेद के कारण भैरव रागांग का प्रयोग नहीं होता है।

जोगिया– उत्तरांग में भैरव रागांग वाचक स्वर संगतियों का प्रयोग किया जाता है। परन्तु पूर्वांग में म रे सा की मींड में गंधार का स्पर्श नहीं किया जाता। गुणक्री की तुलना में भैरव रागांग का स्पष्ट प्रयोग जोगिया में नहीं है।

गौरी (भैरव थाट)– भैरव रागांग का स्पष्ट प्रयोग नहीं होता है, स्वर लगाव में कालिंगड़ा अंग का प्रयोग होता है।

अभ्यास प्रश्न

1) लघु उत्तरीय प्रश्न :

(i) राग भैरव का परिचय दीजिए।
(ii) भैरव रागांग की प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।
(iii) राग अहीर भैरव का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
(iv) राग बैरागी भैरव का परिचय दीजिए।
(v) भैरव रागांग का संगीतात्मक महत्व लिखिए।

2) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) राग भैरव में कौन से स्वर कोमल लगते है?
(ii) राग अहीर भैरव की जाति क्या है?
(iii) बैरागी भैरव में वर्ज्य स्वर क्या है?

(iv) राग रामकली किस रागांग से संबंधित है?

3) सत्य/असत्य बताइए :

(क) राग भैरव का वादी स्वर धैवत है।

(ख) राग भैरव में रे कोमल लगता है।

4) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

(i) राग भैरव में धैवत ..... लगता है।
(ii) भैरव का गायन समय ..... का प्रथम प्रहर है।

2.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप स्वरों की स्वरलिपि को पढ़ सकेंगे एवं राग भैरव को क्रियात्मक रूप से गायन करने में सक्षम होंगे। राग भैरव के गायन के अन्तर्गत आने वाले बड़े ख्याल व छोटे ख्याल की रचनाएँ आपके पाठ्यक्रम के रागों में दी गई हैं। इन रागों का तानों के द्वारा विस्तार भी किया गया है जिससे आप राग में अन्य तानों को स्वयं बनाने में भी सक्षम होंगे एवं आप अपने पाठ्यक्रम के रागों का ख्याल गायन शैली में गायन प्रस्तुत कर सकेंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप राग भैरव में ध्रुपद–धमार की बन्दिश एवं लयकारीयों को समझ कर गा सकने में सक्षम होंगे। साथ ही इस इकाई में आप राग परिचय एवं उनमें लगने वाले विशिष्ट स्वर समुदायों तथा भैरव रागांग के विषय में जान चुके होंगे।

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.4 की उत्तरमाला

2) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) उत्तर : रे और ध
(ii) उत्तर : सम्पूर्ण
(iii) ग ध
(iv) भैरव

3) सत्य/असत्य बताइए :

(क) सत्य **(ख)** सत्य

4) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

(i) कोमल
(ii) प्रातःकाल

सन्दर्भ सूची–

1. परांजपे, शब्दचंद्र / संगीत, भैरव अंक / पृ. 26
2. परांजपे, शब्दचंद्र / संगीत, भैरव अंक / पृ. 28
3. भातखंडे, विष्णु नारायण/हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति/पृष्ठ संख्या दृ 034,165

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भातखण्डे, पंडित विष्णु नारायण, (1970), *हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति, क्रमिक पुस्तक मालिका भाग 1 एवं भाग 2,* संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. पाठक, पंडित जगदीश नारायण,(1996), *संगीत निबन्ध माला,* पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
3. गोवर्धन, श्रीमती शान्ति, (1995), *संगीत शास्त्र दर्पण भाग–2,* पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
4. झा, पंडित रामाश्रय, (2001), *अभिनव गीतांजली भाग–IV*, संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

2.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र, *राग परिचय भाग 1 तथा 2,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र (1993), *मधुर स्वर लिपि संग्रह भाग 1 एवं 2,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. स्वरलिपि पद्धति को समझाते हुए किसी एक वर्णित राग में एक ख्याल एवं एक ध्रुवपद की बंदिश को स्वरलिपि बद्ध कीजिए।
2. भैरव रागांग को विस्तार से समझाइए।

इकाई 3– तीनताल का विस्तृत अध्ययन (ठेका, ठेके के प्रकार, संगत में प्रयोग, विभिन्न प्रकार की लयकारियां)।

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 तीनताल का विस्तृत अध्ययन

- 3.3.1 तीनताल का सम्पूर्ण परिचय
- 3.3.2 ठेका, ठेके के प्रकार
- 3.3.3 संगत में प्रयोग

3.4 तीनताल की लयकारियाँ

- 3.4.1 लयकारियाँ

3.5 सारांश

3.6 शब्दावली

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

3.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी.ए. संगीत के पाठ्यक्रम बी0ए0एम0वी0(एन)–350 के छठे सेमेस्टर की तीसरी इकाई है। राग भैरव के विलम्बित ख्याल, छोटा ख्याल एवं ध्रुपद–धमार की बंदिशों एवं गीतों को लिपिबद्ध करना तथा भैरव रागांग के बारे में सविस्तार समझाया गया है, जिसे आप समझ चुके होंगे।

प्रस्तुत इकाई में भातखण्डे जी द्वारा निर्मित ताललिपि पद्धति में तीनताल का पूर्ण परिचय देते हुए लिपिबद्ध भी किया गया है। साथ ही ताल की लयकारियाँ भी प्रस्तुत की गई हैं।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप ताललिपि पद्धति के महत्व को समझ सकेंगे। हिन्दुस्तानी संगीत से सम्बन्धित तालों के विभिन्न तत्वों को भी जान सकेंगे। गीत रचनाओं में तालों के प्रयोग एवं उन्हें लिपिबद्ध करने की पद्धति को भी आप समझ सकेंगे।

3.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप :–

- बता सकेंगे कि ताललिपि पद्धति द्वारा किस प्रकार ताल का क्रियात्मक स्वरुप प्रस्तुत किया जा सकता है।
- ताल सम्बन्धी समस्त तत्वों को समझते हुए उनके प्रयोग सम्बन्धी नियमों को भी जान सकेंगे।
- ताल के लयकारी सम्बन्धी पक्ष को समझते हुए संगीत में इनका प्रयोग कर सकेंगे।

3.3 तीनताल का विस्तृत अध्ययन

भारतीय शास्त्रीय संगीत में प्रमुख रुप से तालों में तीनताल, एकताल, चारताल, झपताल, धमारताल, तिलवाड़ा ताल एवं रूपक ताल का प्रयोग होता है। तीनताल एवं एकताल ख्याल गायन में सबसे प्रमुख तथा चारताल ध्रुपद गायन की सबसे प्रमुख ताल है। आप ताल सम्बन्धी सम्पूर्ण तत्वों का अध्ययन कर चुके हैं। अब आप पाठ्यक्रम से सम्बन्धित तीनताल का विस्तृत जानकारी प्राप्त करेंगे।

3.3.1 तीनताल का सम्पूर्ण परिचय :

मात्रा – *16*, **विभाग** – *4*, **ताली** – *1, 5 व 13* पर तथा **खाली** – *9* पर

ठेका

धा	धिं	धिं	धा	धा	धिं	धिं	धा	धा	तिं	तिं	ता	धिं	धिं	धा	धा
X				2				0			3				X

परिचय – तीनताल में 16 मात्राएँ होती हैं। यह 16 मात्राएँ 4 विभागों में बटी रहती हैं। चारों विभाग 4–4 मात्राओं के होते हैं। जैसा कि आप सम की परिभाषा जान चुके हैं कि सम हमेशा

प्रथम मात्रा पर होता है। तीनताल में सम 'धा' पर है। खाली का स्थान ताल में बीचों–बीच 9वीं मात्रा पर है।

हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत 'तीनताल' बहुत महत्वपूर्ण ताल है। रागों में द्रुत ख्यालों में अधिकतर इसी ताल का प्रयोग होता है। अनेक विलम्बित ख्याल भी तीनताल में गाए जाते हैं। ताल में सम का स्थान प्रथम मात्रा में होता है परन्तु अधिकतर ख्याल गायन की बंदिशों का प्रारम्भ खाली से होता है इसलिए आवश्यक नहीं है कि बंदिश की पहली मात्रा पर भी सम ही होगा। कई विद्वान इस ताल के बोलों में 'धा' के स्थान पर 'ना' शब्द का प्रयोग भी करते हैं। जैसे – ना धिं धिं ना, ना धिं धिं ना। तबला वादन में भी यह ताल सबसे प्रमुख रूप से बजायी जाती है। अति द्रुत गति के तराना गायन में भी तीनताल विशेष रूप से प्रचलित है।

3.3.2 –ठेका एवं ठेके के प्रकार

ठेका

धा	धिं	धिं	धा	धा	धिं	धिं	धा	धा	तिं	तिं	ता	धिं	धिं	धा	धा
X				2				0			3				X

प्रकार–

धा धिं धिं धाधा। धा धिं धिं धाधा। धा तिं तिं ताता। ता धिं धिं धाधा।
X 2 0 3
घेना धिंन धिंऽ धाऽ। घेना धिंन धिंऽ ताऽ। केना किन ताऽ। धाऽ घेना धिंन धिंऽ
X 2 0 3
धा धिं नाना धिं। धा धिं नाना धिं। ता तिं नाना तिं। ता धिं नाना धिं।
X 2 0 3
धा ऽ धि ऽ। ध ऽ धिं ऽ। ता ऽ तिं ऽ। धा ऽ धिं ऽ।
X 2 0 3

इस प्रकार आप तीनताल का ठेका एवं ठेके के प्रकार को समझ चुके होंगे। तीनताल ने अपनी वादन संगति का विशिष्ट और महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है। वर्तमान काल में सभी कलाकार शास्त्रीय गायन या वादन विधा में तबल पर तीनताल ही अधिक बजाना पसन्द करते हैं।

3.3.3 संगत में प्रयोग

संगत की व्याख्या, अर्थ अथवा परिभाषा

संगत, संगीत की एक अत्यंत महत्वपूर्ण और व्यापक अवधारणा है, जो दो या अधिक तत्वों के पारस्परिक संयोजन से विकसित होती है। यह केवल संगीत तक सीमित न होकर संसार के जीवन–जगत और पदार्थों की निर्माण प्रक्रिया में भी निहित दिखाई देती है। जब दो वस्तुएँ आपस में जुड़ती हैं, तो उनके बीच सामंजस्य और तालमेल उत्पन्न होता है। इसी प्रक्रिया को 'संगत' अथवा 'सुसंगति' कहा जाता है। अतः संगत का मूल उद्देश्य किसी विशेष रूप के साथ जुड़कर, सहयोग करते हुए अथवा समान गति से आगे बढ़ना होता है।

यदि संगीत के संघटक तत्वों पर विचार किया जाए, तो उसमें स्वर, राग, ताल–लय, पद, बंदिश, अभिनय और नृत्य जैसे अनेक घटक सम्मिलित होते हैं। जब ये सभी तत्व परस्पर

एक–दूसरे के साथ समन्वय स्थापित करते हैं या एक–दूसरे को सहयोग प्रदान करते हैं, तब गायन, वादन और नृत्य का संयुक्त स्वरूप उभरकर सामने आता है, जिसे हम संगीत के रूप में पहचानते हैं। जब स्वर और लय को वाद्य तथा ताल का सहयोग प्राप्त होता है, तब गायन कला का विकास होता है। यही गायन जब पद और बंदिश से संयुक्त होता है, तो संगीत का स्पष्ट स्वरूप बनता है और जब यही संगीत अभिनय के सहयोग से जुड़ता है, तो नृत्य की अभिव्यक्ति सामने आती है।

भरत मुनि, पं. शारंगदेव तथा अन्य अनेक संगीताचार्यों और विद्वानों का मत है कि गायन, वादन और नृत्यकृये तीनों कलाएँ अपने–आप में पूर्ण नहीं हैं। इनकी पूर्णता विभिन्न कलाओं के आपसी सहयोग अथवा 'संगत' से ही संभव होती है। तात्पर्य यह है कि संगत स्वयं में कोई स्वतंत्र कला नहीं, बल्कि अनेक कलाओं के समन्वय से निर्मित एक संयुक्त रूप है। ये सभी कला–तत्व परस्पर पूर्ण रूप से मिलकर संगीत रूपी भव्य संरचना का निर्माण करते हैं।

जब किसी कलाकार की प्रस्तुति के समय अन्य कलाकार रचनात्मक एवं संगीतिक सहयोग प्रदान करते हैं और संपूर्ण कार्यक्रम के दौरान उसके साथ कदम से कदम मिलाकर चलते हैं, तो इस प्रकार के सहयोग को 'संगत' कहा जाता है।

इसे इस प्रकार समझा जा सकता है कि जब हम किसी संगीत कार्यक्रम का आनंद लेने हेतु किसी मंच पर जाते हैं, तो देखते हैं कि मुख्य गायक मंच पर गायन कर रहा होता है। उसके पीछे एक या दो कलाकार तानपूरा लिए बैठते हैं और स्वर आधार बनाए रखते हैं। वहीं अन्य कलाकार हारमोनियम अथवा सारंगी के माध्यम से मुख्य गायक की स्वर–रचना, तानों और गायन शैली का अनुसरण करते हैं, जिससे रचना अधिक सजीव और प्रभावशाली बनती है। इसके अतिरिक्त प्रस्तुति को लयबद्ध एवं आकर्षक बनाने के लिए तबला वादक ताल संगत करता है। इस प्रकार मुख्य गायक के अलावा उपस्थित अन्य कलाकार सहयोगी अथवा संगतकार कहलाते हैं।

इस प्रकार प्रत्येक प्रकार के संगीत कार्यक्रम में संगतकारों की भूमिका अत्यंत आवश्यक होती है। किसी भी संगीतिक प्रस्तुति की सफलता या असफलता बहुत हद तक संगतकारों की दक्षता पर निर्भर करती है। इसी कारण श्रेष्ठ कलाकार अपने कार्यक्रमों के लिए अनुभवी और विश्वसनीय सहयोगी कलाकारों का चयन करते हैं, ताकि प्रस्तुति के दौरान कोई बाधा उत्पन्न न हो और कार्यक्रम स्मरणीय बन सके।

परिभाषा–

'संगत' शब्द 'सम' और 'गत' इन दो शब्दों के संयोग से बना है। 'सम' का अर्थ है–साथ या सहित तथा 'गत' का अर्थ है–चलना या जाना। इस प्रकार 'संगत' का तात्पर्य है–साथ चलना या साथ निभाना।

एक अन्य दृष्टि से 'संगत' शब्द 'सह' और 'योग' से भी संबंधित माना जाता है, जहाँ 'सह' का अर्थ साथ तथा 'योग' का अर्थ जुड़ना या मिलना होता है। अंग्रेज़ी भाषा में संगत के लिए Accompaniment शब्द का प्रयोग किया जाता है।

अतः यह कहा जा सकता है कि संगीत प्रस्तुति के दौरान मुख्य कलाकार के साथ सहयोगपूर्वक चलना और उसकी कला को सुदृढ़ बनाना ही संगत कहलाता है। संगीत में इस

प्रकार मुख्य कला एवं सहयोगी कला, तथा मुख्य कलाकार एवं संगतकार का संबंध स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

तीनताल का (गायन) संगत में प्रयोग–

उदाहरण–

राग यमन में छोटा ख्याल के पूर्ण गायकी में तीनताल का संगत में प्रयोग इस प्रकार से किया जायेगा।

राग यमन – मध्यलय ख्याल (तीनताल)

स्थाई – ऐरी आली पिया बिन सखी, कलना परत मोहे घरी पल जिन दिन।
अन्तरा – जब तें पिया परदेस गवन कीनो, रतियाँ कटत मोहे तारे गिन गिन।।

स्थाई

														प	(गर्म)
														अ	(रीऽ)
नि	ध	प	–	–	रे	–	सा	ग	रे	ग	ग	–	–	प	प
ए	ऽ	री	ऽ	ऽ	आ	ऽ	ली	पि	या	बि	न	ऽ	ऽ	स	खि
0				3				x				2			
ग	मं	ग	प	प	ध	प	प	नि	ध	प	प	रे	रे	सा	सा
क	ल	ना	प	र	त	मो	हे	घ	री	प	ल	जि	न	दि	न
0				3				x				2			

अन्तरा

प	प	सां	सां	सां	–	सां	सां	सां	(सां)	नि	ध	नि	ध	प	प
ज	ब	तें	पि	या	ऽ	प	र	दे	ऽ	स	ग	व	न	की	नो
0				3				x				2			
प	गं	रें	सां	नि	ध	प	प	ध	नि	ध	प	रे	रे	सा	सा
र	ति	याँ	क	ट	त	मो	हे	ता	ऽ	ऽ	रे	गि	न	गि	न
0				3				x				2			

अभ्यास प्रश्न

1) लघु उत्तरीय प्रश्न :

(i) तीनताल का परिचय दीजिए।

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

(क) तीनताल में ..... मात्रा होती हैं।

(ख) तीनताल में ..... ताली होती हैं।

3) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) तीनताल में कितने विभाग होते हैं?

(ii) तीनताल में कितनी खाली होती हैं?

संदर्भ सूची

1. तबला संगत एवं कलाकार, डॉ. भीमसेन सरल, पन्ना–36
2. तबला पुराण, पं. विजय शंकर मिश्र, पन्ना 160–161
3. तबला संगत एवं कलाकार, डॉ. भीमसेन सरल, पन्ना–37

3.4 तीनताल की लयकारियाँ

यदि कहा जाए कि लय के बिना संगीत संभव नहीं है तो यह कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। समय की समान गति ही लय कहलाती है। लय एवं लयकारी में अन्तर होता है। लय यदि संज्ञा है तो लयकारी क्रिया है। लय और लयकारी दोनों एक–दूसरे पर आश्रित हैं। बिना लय के लयकारी भी सम्भव नहीं है। लय ही लयकारी का आधार है। लय अनेक प्रकार की हो सकती हैं परन्तु बहुत समय पहले से ही संगीत विद्वानों ने मुख्य रूप से इसके तीन प्रकार माने हैं।

1. विलम्बित लय **2.** मध्य लय **3.** द्रुत लय

इसके अतिरिक्त देखा जाए तो अतिविलम्बित या अति द्रुत लय भी होती है परन्तु मुख्य रूप से क्रमशः यह दोनों भी विलम्बित एवं द्रुत के अन्तर्गत आ जाती हैं, इसीलिए इन तीन मुख्य लय प्रकारों को ही सर्वसम्मति से मान्यता प्राप्त है।

अब आप लयकारी को जानेंगे। लयकारी की परिभाषा हम यह दे सकते हैं कि "संगीत में लय के विभिन्न दर्जे करने की क्रिया को लयकारी कहते हैं।" लय के दर्जे करने से तात्पर्य यह है कि कलाकार जब कलात्मक दृष्टि से कभी एक मात्रा में दो, तीन या चार मात्रा तथा कभी दो में तीन, चार में पाँच मात्रा पढ़कर/दिखाकर लय के चमत्कार का प्रदर्शन करता है तो इसी को लयकारी कहते हैं।

लय के समान ही लयकारी के भी विभिन्न प्रकार माने गए हैं परन्तु इसके भी दो मुख्य प्रकार हैं।

एक सीधी लयकारी होती है जिसके अन्तर्गत दुगुन, चौगुन अठगुन आदि आते हैं। दूसरी आड़ की लयकारी होती है जिसके अन्तर्गत तिगुन, आड़, कुआड़ तथा बिआड़ आदि लयकारियाँ आती हैं।

लयकारियों के अन्तर्गत बहुत प्रकार की लयकारियाँ हो सकती हैं परन्तु पाठ्यक्रम के अनुसार आप सीधी लयकारियों को ही जान सकेंगे। विभिन्न तालों में सीधी लयकारी से सम्बन्धित

दुगुन, चौगुन को आप जानेंगे। तालों में लयकारी करने से पूर्व आड़ लयकारियों के सम्बन्ध में मात्र एक परिचय जानना आवश्यक सा प्रतीत होता है। सीधी लयकारी के अतिरिक्त अन्य प्रकार की लयकारी को जिसके अन्तर्गत एक मात्रा में डेढ़ मात्रा, तीन मात्रा या सवा मात्रा आदि आते हैं, आड़ की लयकारी कहते हैं। परन्तु व्यापक दृष्टि से वर्तमान में आड़ का व्यापक अर्थ हो चुका है। आड़ का विशेष रूप से यह अर्थ है कि वह लयकारी जिसमें एक मात्रा में डेढ़ या दो मात्रा में तीन मात्रा की लयकारी हो। एक मात्रा में डेढ़ हो या 2 मात्रा में 3 बात एक ही है। इसी प्रकार कुआड़ लयकारी के अन्तर्गत एक मात्रा में सवा मात्रा या 4 मात्रा में 5 मात्रा आती हैं। यह लयकारियाँ कठिन मानी जाती हैं। आप यहाँ तालों में सीधी लयकारी करना जान सकेंगे। तालों के विषय में आप सम्पूर्ण परिचय जान चुके है अब तालों की दुगुन, चौगुन लयकारियाँ जानेंगे।

3.4.1 लयकारियाँ :

ठेका

धा धिं धिं धा	धा धिं धिं धा	धा तिं तिं ता	ता धिं धिं धा	धा
X	2	0	3	X

तीनताल की दुगुनः

धा धिं, धिं धा, धा धिं, धिं धा	धा तिं, तिं ता, ता धिं, धिं धा	
X	2	
धा धिं, धिं धा, धा धिं, धिं धा	धा तिं, तिं ता, ता धिं, धिं धा	धा
0	3	X

दुगुन लयकारी में प्रत्येक दो मात्राओं को एक बना दिया जाता है। जैसा आप पहले जान चुके हैं कि दुगुन लयकारी में एक मात्रा में दो मात्रा बोली जाती हैं। देखा जाए तो दुगुन में ताल दो बार पूरे चक्र के साथ बोली जाती है। दुगुन करते समय मात्राएँ एवं विभागों में कोई परिवर्तन नहीं होता है। मात्र दो बोलों को एक मात्रा मान लिया जाता है जैसा कि आपने तीनताल की दुगुन में देखा। दो मात्रा को एक करने के लिए इसके नीचे अर्द्धचन्द्राकार चिन्ह लगा देते हैं।

दुगुन करने की एक और पद्धति भी होती है जिसे 'एक आवर्तन में दुगुन करना' के नाम से सम्बोधित किया जाता है। आप जान चुके हैं कि पहले जो दुगुन की उसमें ताल का चक्र दो बार अर्थात दो आवर्तन में ताल का प्रयोग किया परन्तु एक आवर्तन में दुगुन करने के लिए मात्रा एवं विभाग तो वैसे ही रहेंगे परन्तु एक विशेष जगह से ताल की दुगुन शुरू की जाएगी तथा ताल की दो बार पुनरावृत्ति नहीं होगी। उदाहरण के लिए आप एक आवर्तन में तीनताल की दुगुन को जानेंगे।

एक आवर्तन में तीनताल की दुगुनः

धा धिं धिं धा	धा धिं धिं धा	धा धिं, धिं धा, धा धिं, धिं धा	धा तिं, तिं ता, ता धिं, धिं धा	धा
X	2	0	3	X

तीनताल की चौगुन लयकारी:

धाधिंधिंधा	धाधिंधिंधा	धातिंतिंता	ताधिधिंधा	| धाधिंधिंधा	धाधिंधिंधा	धातिंतिंता	ताधिधिंधा	|
X				2				
धाधिंधिंधा	धाधिंधिंधा	धातिंतिंता	ताधिधिंधा	| धाधिंधिंधा	धाधिंधिंधा	धातिंतिंता	ताधिधिंधा	| धा
0				3				X

एक आवर्तन में तीनताल की चौगुन:

धा	धिं	धिं	धा	| धा	धिं	धिं	धा	|
X				2				
धा	तिं	तिं	ता	| धाधिंधिंधा	धाधिंधिंधा	धातिंतिंता	ताधिधिंधा	| धा
0				3				X

तीनताल की चौगुन 13वीं मात्रा से प्रारम्भ होगी तथा 4 मात्राओं में पूरी चौगुन आ जाएगी। चौथे विभाग की चार मात्राओं में चौगुन पूर्ण रूप में आ जाएगी।

दुगुन व चौगुन लयकारी में आप जान चुके हैं कि जो भी लयकारी करनी हो उतनी मात्राएँ एक मात्रा में समायोजित कर दी जाती है। जैसे दुगुन में दो मात्राओं को एक मात्रा बना देते हैं। इसी प्रकार तिगुन एवं चौगुन में क्रमशः तीन मात्रा एवं चार मात्राओं को एक बनाकर लयकारी की जाती है। लयकारी करते समय अधिक मात्राओं को एक मात्रा बनाते समय चिन्हों पर ध्यान देना आवश्यक होता है।

संगीत में विभिन्न लयकारी जैसे दुगुन, तिगुंन, चौगुन, आड, कुआड, एवं बिआड प्रयोग की जाती है।

दुगुन–	एक मात्रा मेंदो मात्रा	1 2	1 2
तिगुन–	एक मात्रा मेंतीन मात्रा	1 2 3	123
चौगुन–	एक मात्रा मेंचार मात्रा	1234	1234
आड–	एम मात्रा में डेढ़ मात्रा अथवा दो मात्रा में तीन मात्रा आड लयकारी को ड्योडी लय भी लय कहा जाता हैं एवं इसको 3/2 की लयकारी के रूप में भी व्यक्त करते हैं।	1 ऽ 2	ऽ 3 ऽ

कुआड– इस लयकारी के विषय मेंदो मत हैं एक–आड की आड को कुआड कहते हैं अतः 9/4,जिसके अनुसार चार मात्रा में नौ मात्रा अथवा एक मात्रा में$2\frac{1}{4}$ अथवा सवा दो मात्रा का प्रयोग करते है। दो – 5/4 की लयकारी अर्थात चार मात्रा में पांच मात्रा अथवा एक मात्रा मेंसवा मात्रा। इस दुसरे मत का अधिक प्रचलन है एवं इसको सवागुन की लय भी कहते हैं।

पहले मत के अनुसार :–

1ऽ ऽ ऽ 2ऽ ऽ ऽ 3	ऽ ऽ ऽ 4 ऽऽ ऽ 5 ऽ	ऽ ऽ 6 ऽ ऽ ऽ 7 ऽ ऽ	ऽ 8 ऽ ऽ ऽ 9 ऽ ऽ ऽ
1	2	3	4

दूसरे मत के अनुसार–:

1 ऽ ऽ ऽ 2 ऽ ऽ ऽ 3 ऽ ऽ 4 ऽ ऽ ऽ 5 ऽ ऽ ऽ

1 2 3 4

बिआड लय–इस लयकारी के विषय भीदो मत हैं। एक मत के अनुसार कुआड लय की आड बिआड लयकारी होती जिसे $^{9}/_{4} \times {}^{3}/_{2} = \frac{27}{8}$ के रूप में व्यक्त करते हैं एवं दूसरे मत के अनुसार $^{7}/_{4}$ की लयकारी बिआड की लयकारी है। इसमें एक मात्रा में पैने दो गुन मात्रा प्रयोग की जाती है जिसे पौने दो गुन की लयकारी भी कहते हैं।

पहले मत के अनुसार–:

1ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 2 ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 3 ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 4 ऽ ऽ

ऽऽ ऽ ऽ ऽ 5 ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 6 ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 7 ऽऽ ऽ ऽ ऽ

ऽऽ 8 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 9 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 10 ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 11

ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 12 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 13 ऽऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 14ऽ ऽ ऽ

ऽऽ ऽऽ 15 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 16 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 17 ऽऽ ऽ ऽ ऽ

ऽऽ 18 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 19 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 20 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 21 ऽ

ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ 22 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 23 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 24 ऽ ऽ ऽऽ

ऽ ऽ ऽ 25 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 26 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 27 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ

दूसरे मत के अनुसार–:

1 ऽऽ ऽ 2 ऽऽ ऽ 3 ऽ ऽ ऽ 4 ऽ ऽ ऽ 5 ऽऽ ऽ 6 ऽ ऽ ऽ 7 ऽऽ ऽ

कुआड एवं बिआड में दूसरा मत ही अधिक प्रचलित एवं व्यवहारिक है अतः लयकारी लिपि वद्ध करने में दूसरे मत का ही प्रयोगकरेंगे। आड, कुआड एवं बिआड, लयकारी लिखने के लिए इनकी भिन्न अथवा बटे में दिखाई संख्या से भाग देते हैं। गणित के अनुसार भाग देने में बटे की संख्या उलटी होकर गुणा में बदल दी जाती है।

उदाहरण आड को बट्टा संख्या $3/2 = 1\frac{1}{2}$

आड लयकारी की मात्रा संख्या =ताल की मात्रा × $2/3$, किस मात्रा से आरम्भ की जानी है, इसके लिए उपर की संख्या को ताल की मात्रा संख्या से घटाते हैं।

ताल की मात्रा संख्या –ताल की भाग संख्या × $2/3$ जो लयकारी लिखनी है। उसमें बट्टा के नीचे वाली राशी में से एक घटाकर उतनी संख्या के अवग्रह लगाते हैं।

उदाहरण–आड की लयकारी–$^{3}/_{2}$ =2–1= 1 →

कुआड की लयकारी– $^{5}/_{4} = 4 - 1 = 3$ →

बिआड की लयकारी–$^{7}/_{4} = 4 - 1 = 3$ →

अतः आड की लयकारी को मात्रा के साथ एक अवग्रह, कुआड एवं बिआड की लयकारी में तीन अवग्रह लगाते हैं। इसके पश्चात बट्टा की उपरवाली राशि में विभाग बना लेते हैं। सरलता के लिए पीछे से विभाग बनाना शुरू करते हैं एवं पहली मात्रा में जितनी मात्रा कम होती हैं, मात्रा से पहले उतने अवग्रह लगा देते हैं, जो कि आप विभिन्न तालों में लयकारी के उदाहरण से समझेंगे।

<u>तीनताल की आड की लयकारी</u>–$^{3}/_{2}$ मात्रा की लयकारी मे दो मात्रा में तीन मात्रा अथवा एक मात्रा डेढ मात्रा प्रयोग की जाती हैं अतः तीनताल के ठेके को तीन बार प्रयोग किया जाऐगा, जो कि तीनताल के ठेके की दो आवृति में आएगा। एक आवृति में तीनताल की आड$16 \times {}^{2}/_{3} = 10\frac{2}{3}$ मात्रा में आएगी एवं $5\frac{1}{3}$ मात्रा के बाद आरम्भ होगी।

6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
1धाऽ	धिंऽधिं	ऽधाऽ	धाऽधि	ऽधिंऽ	धाऽधा	ऽतिंऽ	तिंऽता	ऽताऽ	धिंऽधिं	ऽधाऽ

<u>तीनताल की कुआड की लयकारी</u>–$^{5}/_{4}$अर्थात एक मात्रा में सवा मात्रा अथवा$1\frac{1}{4}$मात्रा। इसके लिए तीनताल की प्रत्येक मात्रा को चार मात्रा के बनाऐंगे तथा प्रत्येक मात्रा में तीन अवग्रह लगाकर पॉच मात्रा के भागको एक मात्रा में रखेंगे। तीनताल की कुआड$16 \times {}^{4}/_{5} = \frac{64}{5} = 12\frac{4}{5}$ मात्रा की होगी एवं तीनताल की $3\frac{1}{5}$ मात्रा के बाद आरम्भ होगी।

4	5	6	7	8	9
1 धाऽऽऽ	धिंऽऽऽधिं	ऽऽऽधाऽ	ऽऽधाऽऽ	ऽधिंऽऽऽ	धिंऽऽऽध

10	11	12	13	14	15	16
ऽऽऽधाऽ	ऽऽतिंऽऽ	ऽतिंऽऽऽ	ताऽऽऽता	ऽऽऽधिंऽ	ऽऽधिंऽऽ	ऽधाऽऽऽ

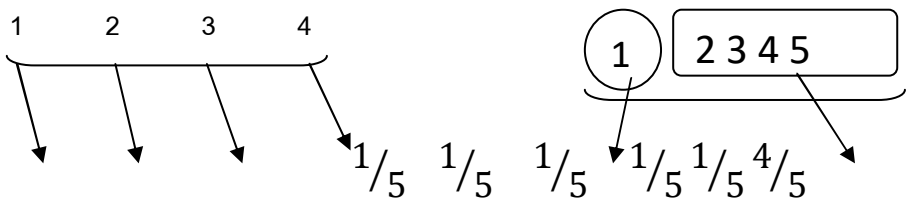

तीनताल की बिआड की लयकारी– $^{7}/_{4}$ अर्थात् चार मात्रा में सात मात्रा। कुआड की भॉति ही प्रत्येक मात्रा के बाद तीन अवग्रह लगाएगे परन्तु बिआड की लयकारी हेतु सात मात्रा के भागों को एक मात्रा में रखेंगे। तीनताल की बिआड $9\frac{1}{7}$ मात्रा की होगी एवं तीनताल की $6\frac{6}{7}$ मात्रा के बाद आरम्भ होगी ।

7	8	9	10	11
ऽऽऽऽऽऽधा	ऽऽऽधिंऽऽऽ	धिंऽऽऽधाऽऽ	ऽधाऽऽऽधिंऽ	ऽऽधिंऽऽऽधा
		2		
12	**13**	**14**	**15**	**16**
ऽऽऽधऽऽऽ	तिऽऽऽतिंऽऽ	ऽताऽऽऽताऽ	ऽऽधिंऽऽऽधिं	ऽऽऽधऽऽऽ
	3			

अभ्यास प्रश्न

1) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

(i) लयकारी से आप क्या समझते है? तीनताल की दुगुन व चौगुन लयकारी लिखिए।

2) लघु उत्तरीय प्रश्न :

(i) तीनताल की चौगुन लयकारी लिखिए।

(ii) तीनताल की दुगुन लयकारी लिखिए।

(iii) लयकारी से आप क्या समझते हैं?

3) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) तीनताल की चौगुन किस मात्रा से प्रारम्भ होगी?

(ii) चौगुन लयकारी में एक मात्रा में कितनी मात्रा समाहित होती हैं?

(iii) तीनताल की दुगुन कितनी मात्राओं में पूर्ण रूप में आती है?

3.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान चुके हैं कि संगीत के अभिन्न अंग व तालों की उत्पत्ति रागों की रंजकता को बढ़ाने के लिए हुई है। वर्तमान समय में उत्तरी भारत में अनेकों ताल प्रचलित हैं। जैसे – तीनताल, एकताल, चारताल, झपताल, रूपक, धमार, दीपचन्दी आदि। ताल के योग से संगीत में रसानुभूति क्षणिक न रहकर परमानन्द प्राप्ति के साधन में सहायता करती है। पहले गीत रचनाओं एवं तालों से सम्बन्धित सभी अव्यवों को कंठस्थ करना पड़ता था परन्तु तालिपि पद्धति के आने से इस क्षेत्र में क्रान्ति का सूत्रपात हो गया। संगीत के अन्तर्गत आने वाली समस्त स्वर–ताल बद्ध रचनाओं में लय एवं ताल के समस्त अंगों को समझना बेहद आसान हो गया है। गीत रचनाओं में जिस लय एवं ताल में संगत होती है उसमें समान रूप से कायम रहना परम आवश्यक है। विशेष रूप से ख्याल गायन में ताल पक्ष के लिए 'तबला' वाद्य में संगत की जाती है तथा ध्रुपद गायन में 'पखावज' वाद्य में संगत की जाती है। विभिन्न तालों की लयकारी में विभिन्न लयों के मध्यम से चमत्कार का प्रदर्शन किया जाता है। लयकारी द्वारा गीत

रचनाओं एवं तालों में कुछ नवीनता आ जाती है जिससे गायन–वादन में नवीन सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है। इस इकाई के अध्ययन से आप लय–ताल एवं लयकारी के सम्बन्ध में सभी तत्वों के समुचित प्रयोग को समझ सकेंगे।

3.6 शब्दावली

- **थपिया बाज** : पखावज पर बजने वाली ताले खुले बोल की तालें होती हैं, जिन्हें थपिया बाज की ताल भी कहते हैं। पखावज वाद्य में थाप का विशेष महत्व है। गीला आटा लगाकर इसकी थाप में विशेष गूंज उत्पन्न हो जाती है। पूरी हथेली से बजने के कारण ही इसकी थाप का विशेष महत्व है और इसे थपिया बाज कहते हैं।
- **धमार गायन :** ध्रुपद एवं ख्याल गायन के मध्य अपनी स्थिति रखने वाला गायन धमार है। ध्रुपद शैली से गाया जाने वाला गीत का प्रकार धमार कहलाता है। विशेष रूप से राधा एवं कृष्ण इस गीत के गायक होते हैं तथा होली के अवसर पर ब्रज की होरी, राधा–कृष्ण एवं गोपियों की होरी, अबीर गुलाल, फाग, पिचकारियाँ, रंगों एवं भीगी चुनरियों का वर्णन इसमें होता है।

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.3.1 की उत्तरमाला :

2) एक शब्द में उत्तर दो :

(i) 16
(ii) 03

2)रिक्त स्थानों की पूर्ति करो :

(क) उत्तर : 4 **(ख)** उत्तर : 1

3.4 की उत्तरमाला :

2)रिक्त स्थानों की पूर्ति करो :

(क) उत्तर : 1 **(ख)** उत्तर : चार

3)एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) उत्तर : 1
(ii) उत्तर : 4
(iii) 8

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भातखण्डे, पंडित विष्णु नारायण, (1970), *हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति, क्रमिक पुस्तक मालिका भाग 1 एवं भाग 2,* संगीत कार्यालय, हाथरस।

2. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र, (1990), *राग परिचय भाग 2,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
3. गोवर्धन, श्रीमती शान्ति, (1995), *संगीत शास्त्र दर्पण भाग–2,* पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
4. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र, (1993), *तबला प्रकाश भाग–1,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

3.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. श्रीवास्तव, आचार्य गिरीश चन्द्र, (1994), *ताल प्रभाकर प्रश्नोत्तरी,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

2. कौर, डॉ0 भगवन्त, *परम्परागत हिन्दुस्तानी सैद्धान्तिक संगीत,* कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. तीनताल का सम्पूर्ण परिचय देते हुए इनकी दुगुन एवं चौगुन की लयकारियाँ लिखिए।

इकाई 4–एकताल का विस्तृत अध्ययन (ठेका, ठेके के प्रकार, संगत में प्रयोग, विभिन्न प्रकार की लयकारियां)।

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 एकताल का विस्तृत अध्ययन

- 4.3.1 एकताल का सम्पूर्ण परिचय
- 4.3.2 एकताल की लयकारियाँ
- 4.3.3 संगत में प्रयोग

4.4 सारांश

4.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.6 संदर्भ ग्रन्थ सूची

4.7 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी.ए. संगीत के पाठ्यक्रम बी0ए0एम0वी0(एन)–350 के छठे सेमेस्टर की चौथी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के पश्चात आप बता सकते हैं कि भातखण्डे जी द्वारा निर्मित तालिपि पद्धति में पूर्ण परिचय देते हुए पाठ्यक्रम की तीनताल को लिपिबद्ध करना साथ ही तीनताल की लयकारियाँ को जान चुके होंगे।

प्रस्तुत इकाई में भातखण्डे जी द्वारा निर्मित तालिपि पद्धति में पाठ्यक्रम के एकताल का विस्तृत अध्ययन (ठेका, ठेके के प्रकार, संगत में प्रयोग, विभिन्न प्रकार की लयकारियां समझ सकेंगे।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप एक की तालिपि पद्धति के महत्व को समझ सकेंगे। गीत रचनाओं में एक ताल के प्रयोग एवं उन्हें लिपिबद्ध करने की पद्धति को भी आप समझ सकेंगे।

4.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप :–

- बता सकेंगे कि तालिपि पद्धति द्वारा किस प्रकार ताल का क्रियात्मक स्वरुप प्रस्तुत किया जा सकता है।
- ताल सम्बन्धी समस्त तत्वों को समझते हुए उनके प्रयोग सम्बन्धी नियमों को भी जान सकेंगे।
- ताल के लयकारी सम्बन्धी पक्ष को समझते हुए संगीत में इनका प्रयोग कर सकेंगे।

4.3 एकताल का विस्तृत अध्ययन

भारतीय शास्त्रीय संगीत में प्रमुख रुप से तालों में तीनताल, एकताल, चारताल, झपताल, धमारताल, तिलवाड़ा ताल एवं रूपक ताल का प्रयोग होता है। तीनताल एवं एकताल ख्याल गायन में सबसे प्रमुख तथा चारताल ध्रुपद गायन की सबसे प्रमुख ताल है। आप ताल सम्बन्धी सम्पूर्ण तत्वों का अध्ययन कर चुके हैं। अब आप पाठ्यक्रम से सम्बन्धित कुछ तालों की विस्तृत जानकारी प्राप्त करेंगे।

4.3.1 एकताल का सम्पूर्ण परिचय :

मात्रा – 12, **विभाग** – 6, **ताली** – 1, 5, 9 व 11 पर तथा **खाली** – 3 व 7 पर

धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तू	ना	कत	ता	धागे	तिरकिट	धी	ना
×		0		2		0		3		4	

ठेका

परिचय – एकताल में 12 मात्राएँ होती हैं। इसकी 12 मात्राएँ 6 विभागों में बटी रहती हैं। प्रत्येक विभाग 2 मात्रा का होता है। सम प्रथम स्थान, 'धिं' पर होता है। खाली के स्थान दो हैं तथा ताली के स्थान 4 हैं।

ख्याल गायन में 'विलम्बित ख्याल' के अन्तर्गत यह सबसे प्रमुख ताल है। प्रत्येक राग में अनेक बड़े ख्याल एकताल में निबद्ध होते हैं। वर्तमान में अनेक द्रुत ख्याल भी एकताल में निबद्ध हैं। कुछ वर्षों पूर्व एकताल अधिकतर 'विलम्बित ख्याल' में ही प्रयुक्त की जाती थी। एकताल का चक्र घूमता हुआ होता है, जिस प्रकार 'दादरा ताल' का ठेका घूमता हुआ होता है, क्योंकि यह 6 मात्रा की होती है। इसी प्रकार एकताल में ठीक उससे दुगुनी 12 मात्राएँ होती हैं और यह भी घूमती लय में बजती है। ख्याल गायन के क्षेत्र में यह ताल विशेष रूप से प्रयोग की जाती है। विलम्बित ख्याल में यह ताल बहुत धीमी लय में बजती है परन्तु **धागे तिरकिट** जैसे बड़े बोलों के कारण इसके भराव में आसानी हो जाती है। धीमी लय में मात्राओं को भरने के लिए यह बोल सहायता प्रदान करते हैं। ग्वालियर, आगरा, रामपुर एवं दिल्ली घराने के गायक अधिकतर इस ताल में बड़ा ख्याल गाते हैं परन्तु किराना घराने के गायक एकताल में बड़ा ख्याल गाते समय इसकी लय अतिविलम्बित कर देते हैं।

अभ्यास प्रश्न

1) लघु उत्तरीय प्रश्न :।

(i) एकताल का स्वरुप बताइए।

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

(क) एकताल में तीसरी मात्रा पर ..... होती है।

(ख) एक ताल ..... मात्रा की होती है।

3) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) एक में कितनी खाली होती हैं?
(ii) एकताल किस गायन शैली में प्रयुक्त होती है?

4.3.2 एकताल की लयकारियाँ–

यदि कहा जाए कि लय के बिना संगीत संभव नहीं है तो यह कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। समय की समान गति ही लय कहलाती है। लय एवं लयकारी में अन्तर होता है। लय यदि संज्ञा है तो लयकारी क्रिया है। लय और लयकारी दोनों एक–दूसरे पर आश्रित हैं। बिना लय के लयकारी भी सम्भव नहीं है। लय ही लयकारी का आधार है। लय अनेक प्रकार की हो सकती हैं परन्तु बहुत समय पहले से ही संगीत विद्वानों ने मुख्य रूप से इसके तीन प्रकार माने हैं।

1. विलम्बित लय 2. मध्य लय 3. द्रुत लय

इसके अतिरिक्त देखा जाए तो अति विलम्बित या अति द्रुत लय भी होती है परन्तु मुख्य रूप से क्रमशः यह दोनों भी विलम्बित एवं द्रुत के अन्तर्गत आ जाती हैं, इसीलिए इन तीन मुख्य लय प्रकारों को ही सर्वसम्मति से मान्यता प्राप्त है।

अब आप लयकारी को जानेंगे। लयकारी की परिभाषा हम यह दे सकते हैं कि "संगीत में लय के विभिन्न दर्जे करने की क्रिया को लयकारी कहते हैं।" लय के दर्जे करने से तात्पर्य यह है कि कलाकार जब कलात्मक दृष्टि से कभी एक मात्रा में दो, तीन या चार मात्रा तथा कभी दो में तीन, चार में पाँच मात्रा पढ़कर/दिखाकर लय के चमत्कार का प्रदर्शन करता है तो इसी को लयकारी कहते हैं।

लय के समान ही लयकारी के भी विभिन्न प्रकार माने गए हैं परन्तु इसके भी दो मुख्य प्रकार हैं।

एक सीधी लयकारी होती है जिसके अन्तर्गत दुगुन, चौगुन अठगुन आदि आते हैं। दूसरी आड़ की लयकारी होती है जिसके अन्तर्गत तिगुन, आड़, कुआड़ तथा बिआड़ आदि लयकारियाँ आती हैं।

लयकारियों के अन्तर्गत बहुत प्रकार की लयकारियाँ हो सकती हैं परन्तु पाठ्यक्रम के अनुसार आप सीधी लयकारियों को ही जान सकेंगे। विभिन्न तालों में सीधी लयकारी से सम्बन्धित दुगुन, चौगुन को आप जानेंगे। तालों में लयकारी करने से पूर्व आड़ लयकारियों के सम्बन्ध में मात्र एक परिचय जानना आवश्यक सा प्रतीत होता है। सीधी लयकारी के अतिरिक्त अन्य प्रकार की लयकारी को जिसके अन्तर्गत एक मात्रा में डेढ़ मात्रा, तीन मात्रा या सवा मात्रा आदि आते हैं, आड़ की लयकारी कहते हैं। परन्तु व्यापक दृष्टि से वर्तमान में आड़ का व्यापक अर्थ हो चुका है। आड़ का विशेष रूप से यह अर्थ है कि वह लयकारी जिसमें एक मात्रा में डेढ़ या दो मात्रा में तीन मात्रा की लयकारी हो। एक मात्रा में डेढ़ हो या 2 मात्रा में 3 बात एक ही है। इसी प्रकार कुआड़ लयकारी के अन्तर्गत एक मात्रा में सवा मात्रा या 4 मात्रा में 5 मात्रा आती हैं। यह लयकारियाँ कठिन मानी जाती हैं। आप यहाँ तालों में सीधी लयकारी करना जान सकेंगे। तालों के विषय में आप सम्पूर्ण परिचय जान चुके है अब तालों की दुगुन, चौगुन लयकारियाँ जानेंगे।

लयकारियाँ :

ठेका

धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तू	ना	कत	ता	धागे	तिरकिट	धी	ना	धिं
X		0		2		0		3		4		X

एकताल की दुगुनः

धिंधिं	धागेतिरकिट	तूना	कतता	धागेतिरकिट	धीना	
X		0		2		

धिंधिं	धागेतिरकिट	तूना	कतता	धागेतिरकिट	धीना	धिं
0		3		4		X

तीनताल के समान एकताल की दुगुन लयकारी में भी प्रत्येक दो मात्राओं को एक कर दिया जाता है तथा विभागों में मात्रा की संख्या तथा विभागों का स्वरूप एक जैसा रहता है। बस ताल का ठेका दो बार प्रयोग में लाया जाता है। एकताल की दुगुन करने के लिए दूसरे प्रकार को भी प्रयोग में लाया जाता है, जिसमें एक आवर्तन में एकताल की दुगुन की जाती है।

एक आवर्तन में एकताल की दुगुन :

धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तू	ना	धिंधिं	धागेतिरकिट	तूना	कतता	धागेतिरकिट	धीना	धिं
X		0		2		0		3		4		X

एकताल की दुगुन 7वीं मात्रा से प्रारम्भ होगी तथा 6 मात्राओं में सम्पूर्ण होकर, दुगुन लयकारी आ जाएगी। इसमें एक आवर्तन का ही प्रयोग होगा अर्थात ठेका एक ही बार प्रयोग में आएगा।

एकताल की चौगुन लयकारी – एकताल की चौगुन के लिए चार बार ठेके की पुनरावृत्ति करनी होगी।

धिंधिंधागेतिरकिट	तूनाकतता	धागेतिरकिटधीना	धिंधिंधागेतिरकिट	
X		0		

तूनाकतता	धागेतिरकिटधीना	धिंधिंधागेतिरकिट	तूनाकतता	
2		0		

धागेतिरकिटधीना	धिंधिंधागेतिरकिट	तूनाकतता	धागेतिरकिटधीना	धिं
3		4		X

एक आवर्तन में एकताल की चौगुनः

धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तू	ना	
X		0		2		
कत	ता	धागे धिंधिंधागेतिरकिट		तूनाकतता	धागेतिरकिटधीना	धिं
0		3		4		X

एकताल की चौगुन 10वीं मात्रा से प्रारम्भ होगी तथा 3 मात्राओं में पूरी चौगुन आ जाएगी।

आड की लयकारी–एक ताल के ठेके में धागे में 'धा' वगे की मात्रा का मूल्य आधी–आधी मात्रा का है एवं तिरकिट में 'ति', 'र', 'कि' 'ट' की प्रत्येक की मात्रा का मूल्य $1/4$ मात्रा का है। आड की लयकारी में स्वतंत्र मात्रा जैसे धिं, तू, ना, क एवं ता बोले में एक अवग्रह लगाएगें परन्तु धागे के बोल में 'धा' एवं 'गे' बोलकर प्रथक कर देंगे एवं तिरकिट के बोल को 'तिर' व 'किट'को पृथक कर प्रयोग करेंगे, जो एकताल की आडलयकारी से स्पष्ट हो जाएगा।

5	6	7	8	9	10	11	12
धिऽधि	ऽधागे	तिरकिटतू	ऽनाऽ	कऽता	ऽधागे	तिरकिटधि	ऽनाऽ
2		0		3		4	

एकताल की आड की लयकारी $12 \times \frac{2}{3} = 8$ मात्रा में आती है एवं पाचवीं मात्रा से आरम्भ कर सम पर आएगी।

कुआड की लयकारी– $5/4$ की लयकारी में एकताल की कुआड की लयकारी $12 \times \frac{4}{5} = 9\frac{3}{5}$ मात्रा की होगी एवं $2\frac{2}{5}$ मात्रा के बाद आरम्भ होकर सम पर आएगी ।

3	4	5	6	7
12धिऽऽ	ऽधिऽऽऽ	धाऽगेऽति	रकिटतूऽ	ऽऽनाऽऽ
0		2		0
8	9	10	11	12
ऽकऽऽऽ	ताऽऽऽधा	ऽगेऽतिर	किटधिऽऽ	ऽनाऽऽऽ
	3		4	

$2/5$ —— 1 2 | धिं ऽ ऽ ऽ ना —— $3/5$

बिआड की लयकारी– एक ताल की बिआड की लयकारी $12 \times \frac{4}{7} = \frac{48}{7} = 6\frac{6}{7}$ मात्रा की होगी एवं $5\frac{1}{7}$ मात्रा के बाद आरम्भ होकर सम पर आएगी।

6	7	8	9	10	11	12
ऽधिंऽऽऽधिंऽ	ऽऽधाऽगेऽति	रकिटतूऽऽऽ	नाऽऽऽकऽऽ	ऽताऽऽऽधाऽ	गेऽतिरकिऽधि	ऽऽऽनाऽऽऽ
	0		3		4	

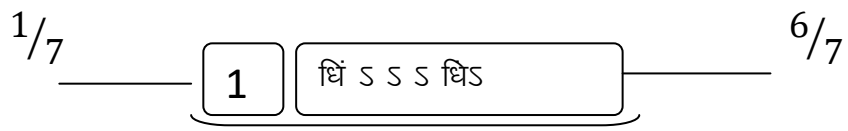

4.3.3 एकताल का (गायन) संगत में प्रयोग–

उदाहरण–

राग यमन में विलम्बित ख्याल के पूर्ण गायकी में एकताल का संगत में प्रयोग इस प्रकार से किया जायेगा।

राग यमन– विलम्बित ख्याल (एकताल)

स्थाई – मेरा मन बाँध लीनो रे हाँ रे इन जोगीया के साथ

अन्तरा – सदारंग करम करो क्यूं न इन प्राननाथ के हाथ

स्थाई

नि़	प़	निध	सारे	सा	–	नि़	रे	ग	रे	सा	(सा)
मे	रा	ऽऽ	मन	बाँ	ऽ	ऽ	ध	ली	नो	रे	ऽ
3		4		X		0		2		0	
निनि	(प)	रे	मंमं	प	(प)	ग	रे	ध़	नि़	सा	सा
हाँऽ	रे	ऽ	इन	जो	गी	या	के	सा	ऽ	ऽ	थ
3		4		X		0		2		0	

अन्तरा

ग	मं	प	ध	निनि	(प)	मंग	गप	ग	रे	नि़सारे	स
स	दा	रं	ग	कऽ	रऽ	मऽ	कऽ	रो	ऽ	क्यूंऽ	न
3		4		X		0		2		0	
नि़	रे	ग	मं	निनि	(प)	मंग	प	रे	नि़	रे	सा
इ	न	प्रा	ऽ	नऽ	ना	ऽऽ	थ	के	हा	ऽ	थ
3		4		X		0		2		0	

4.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान चुके हैं कि संगीत के अभिन्न अंग व तालों की उत्पत्ति रागों की रंजकता को बढ़ाने के लिए हुई है। वर्तमान समय में उत्तरी भारत में अनेकों ताल प्रचलित हैं। जैसे – तीनताल, एकताल, चारताल, झपताल, रूपक, धमार, दीपचन्दी आदि। ताल के योग से संगीत में रसानुभूति क्षणिक न रहकर परमानन्द प्राप्ति के साधन में सहायता करती है। पहले गीत रचनाओं एवं तालों से सम्बन्धित सभी अव्यवों को कंठस्थ करना पड़ता था परन्तु तालिपि पद्धति के आने से इस क्षेत्र में क्रान्ति का सूत्रपात हो गया। संगीत के अन्तर्गत आने वाली समस्त स्वर–ताल बद्ध रचनाओं में लय एवं ताल के समस्त अंगों को समझना बेहद आसान हो गया है। गीत रचनाओं में जिस लय एवं ताल में संगत होती है उसमें समान रूप से कायम रहना परम आवश्यक है। विशेष रूप से ख्याल गायन में ताल पक्ष के लिए 'तबला' वाद्य में संगत की जाती है तथा ध्रुपद गायन में 'पखावज' वाद्य में संगत की जाती है। विभिन्न तालों की लयकारी में विभिन्न लयों के मध्यम से चमत्कार का प्रदर्शन किया जाता है। लयकारी द्वारा गीत रचनाओं एवं तालों में कुछ नवीनता आ जाती है जिससे गायन–वादन में नवीन सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है। इस इकाई के अध्ययन से आप लय–ताल एवं लयकारी के सम्बन्ध में सभी तत्वों के समुचित प्रयोग को समझ सकेंगे।

4.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.4 की उत्तरमाला :

2) एक शब्द में उत्तर दो :

(i) उत्तर : खाली
(ii) उत्तर : 8

3)रिक्त स्थानों की पूर्ति करो :

(क) उत्तर : एक **(ख)** उत्तर : ख्याल

4.5 की उत्तरमाला :

3) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) उत्तर : 4
(ii) उत्तर : तीन मात्राओं में

4.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भातखण्डे, पंडित विष्णु नारायण, (1970), *हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति, क्रमिक पुस्तक मालिका भाग 1 एवं भाग 2,* संगीत कार्यालय, हाथरस।

2. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र, (1990), *राग परिचय भाग 2,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
3. गोवर्धन, श्रीमती शान्ति, (1995), *संगीत शास्त्र दर्पण भाग–2,* पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
4. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र, (1993), *तबला प्रकाश भाग–1,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

4.7 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. श्रीवास्तव, आचार्य गिरीश चन्द्र, (1994), *ताल प्रभाकर प्रश्नोत्तरी,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

2. कौर, डॉ0 भगवन्त, *परम्परागत हिन्दुस्तानी सैद्धान्तिक संगीत,* कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. एकताल का सम्पूर्ण परिचय देते हुए इनकी दुगुन एवं चौगुन की लयकारियाँ लिखिए।

इकाई 5– अपनी विधा से सम्बंधित संगीत वाद्य का पूर्ण ज्ञान (संरचना, रख–रखाव, वाद्य मिलाने की विधि, प्रस्तुतिकरण में प्रयोग)।

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 तानपुरा वाद्य
- 5.3.1 तानपुरा की उत्पत्ति एवं विकास
- 5.3.2 तानपुरे के अंग
- 5.3.3 तानपुरा और सहायक नाद
- 5.3.4 तानपुरे को मिलाने की विधि
- 5.3.5 तानपुरे के प्रकार एवं प्रस्तुतिकरण में प्रयोग

5.4 सारांश
5.5 शब्दावली
5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
5.9 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी.ए. संगीत के पाठ्यक्रम बी0ए0एम0वी0(एन)–350 के छठे सेमेस्टर की पांचवी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप बता सकते हैं कि भातखण्डे जी द्वारा निर्मित तालिपि पद्धति में पूर्ण परिचय देते हुए पाठ्यक्रम की एकताल को लिपिबद्ध करना, ठेके, ठेके के प्रकार साथ ही एकताल की लयकारियाँ को जान चुके होंगे

प्रस्तुत इकाई शास्त्रीय संगीत में संगत हेतु प्रयुक्त सबसे महत्वपूर्ण वाद्य 'तानपुरा' के विषय में भी इस इकाई में बताया गया है। तानपुरे की पूर्ण संरचना एवं वादन विधि का वर्णन भी इसमें प्रस्तुत है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप भारतीय शास्त्रीय संगीत के सबसे प्रमुख संगत वाद्य तानपुरे की संरचना एवं उसकी वादन विधि को भी इस इकाई के अध्ययन के पश्चात समझ सकेंगे।

5.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :–

- शास्त्रीय संगीत में प्रयुक्त सबसे महत्वपूर्ण संगत वाद्य तानपुरे की संरचना व वादन विधि को भी समझ सकेंगे।

5.3 तानपुरा वाद्य

भारतीय शास्त्रीय संगीत में संगति के लिए सबसे आवश्यक एवं महत्वपूर्ण संगत वाद्यों में तानपुरा का नाम सर्वोपरि है। गायकों के लिए यह अनिवार्य वाद्य है। यह भारतीय संगीत की आत्मा है। तानपुरा को तम्बूरा नाम से भी जाना जाता है। गायन में यह अनिवार्य रूप से बजाया जाता है परन्तु वादन एवं नृत्य में भी इसका प्रयोग किया जाता है। नाटकों एवं सिनेमा के दृश्यों में भी इसकी भूमिका विशेष रूप से देखी जा सकती है। तानपुरा बजते ही सांगीतिक रूप से अनुकूल वातावरण की सृष्टि हो जाती है। इसका स्वर बहुत मधुर होता है तथा स्वतः गायक या वादक का मन गायन या वादन के लिए प्रेरित हो उठता है। तानपुरे की झनकार सुनते ही गायक एवं वादक का मन आनन्दित हो उठता है।

प्राचीन संगीत ग्राम व मूर्च्छना पर आधारित था। इसमें षड्ज(सा) तथा पंचम(प) अपने स्थान से बदल भी सकते थे। जिससे मूर्च्छना द्वारा अनेक जातियों का गायन होता था परन्तु आज हमारे सप्तक में षड्ज एवं पंचम अचल स्वर हैं। आज सभी स्वरों का सम्बन्ध षड्ज से है। तानपुरे में यही षड्ज एवं पंचम स्वरों की लगातार गूंज से एक संगीतमय वातावरण की पृष्ठभूमि बन जाती है जिसकी सहायता से गायक व वादक किसी भी राग को भावपूर्ण तरीके से गा–बजा सकता है।

5.3.1 तानपुरा की उत्पत्ति एवं विकास – विद्वानों का मत है कि पौराणिक गायक तुम्बरू ने तानपुरे का आविष्कार किया। प्राचीन ग्रन्थों में इसकी चर्चा नहीं है। मूर्तिकलाओं एवं शिल्प कलाओं में भी इस वाद्य का चित्र प्राप्त नहीं होता है। प्राचीन काल में एकतंत्री एवं दोतंत्री वीणा को निरन्तर

बजाकर गायन सम्पन्न होता था। ऐसा प्रतीत होता है कि आवश्यकता को ध्यान में रखकर धीरे–धीरे संवाद सिद्धान्त के आधार पर चार तारों के इस तानपुरा वाद्य की सृष्टि हुई होगी। विद्वानों का मत यह भी है कि प्राचीन त्रितंत्री वीणा का विकसित रूप ही तानपुरा है। इस वीणा की संगत गायन के साथ की जाती थी। इस तीन तार वाली वीणा में एक तार और जोड़कर ही तम्बूरे की उत्पत्ति हुई होगी। डॉ0 लालमणि मिश्र के अनुसार त्रितंत्री वीणा का विकास दो रूपों में हुआ– 1. तानपुरा 2. सितार

5.3.2 तानपुरे के अंगः–

1. तूम्बाः यह कद्दू का बना होता है जिसको एक तरफ से काट कर चपटा किया जाता है। फिर इस पर लकड़ी का मुख भाग लगाया जाता है।
2. डांडः लकड़ी का खोखला डंडा जो तूम्बे के साथ जुड़ा रहता है डांड कहलाता है। इसके ऊपर तारें चढ़ी रहती हैं।
3. तबलीः तुम्बे के ऊपर वाले चपटे भाग को तबली कहते हैं। इसमें नक्कासी का काम किया जाता है तथा ऊपर घुड़च्च रखी जाती है।
4. घुड़च्चः तबली के ऊपर रखी हुई हाथी दाँत के छोटे आकार की चौकीनुमा भाग को घुड़च्च कहते हैं। इसके ऊपर से तार जाते हैं।
5. लंगोटः तुम्बे के दाँयी ओर लगे हुए कील को, जिसके ऊपर तार बॉधे जाते है, लंगोट कहते है।
6. गुलूः डांड एवं तुम्बे के जोड़ वाले स्थान को गूलू कहा जाता है।
7. अट्टी या तारदानः डांड के ऊपर वाले भाग में हड्डियों से बनी हुई दो पट्टियाँ लगी रहती हैं जिसमें छिद्र होते हैं तथा इन छिद्रों से तार निकलकर खूटियों में बाँध दिए जाते हैं। इसी भाग को अट्टी या तारदान कहते हैं।
8. खूंटियाँः तम्बूरे के चार तार अट्टी से होते हुए खूटियों के साथ बाँध दिए जाते हैं। यह खूंटियाँ ऊपरी भाग में होती हैं। दो खूंटियाँ डांड के सामने तथा दो खूंटियाँ डांड के दाँयी एवं बाँयी ओर लगी होती हैं।
9. तारः तानपुरे में चार तार लगे होते हैं। जिनमें प्रथम तीन तार फौलाद के तथा शेष एक तार पीतल का होता है।
10. मनकेः घुड़च्च या ब्रिज के नीचे छोटे–छोटे मोती जैसे मनके तारों में डाल दिए जाते हैं जिनसे सूक्ष्म रूप में स्वर के उतार–चढ़ाव को निर्धारित किया जा सकता है।

11. **धागा:** घुड़च्च के ऊपर तारों पर गूंज के लिए धागा लगाया जाता है। जब तार में कम्पन्न होता है तब इस कम्पन्न में धागा मुख्य स्वर के अतिरिक्त अन्य स्वयंभू स्वरों के उत्पन्न होने में सहायक रहता है। इसी कारण अन्य स्वर जो सहायक नाद कहलाते हैं, सुनाई देते हैं।

तानपुरा

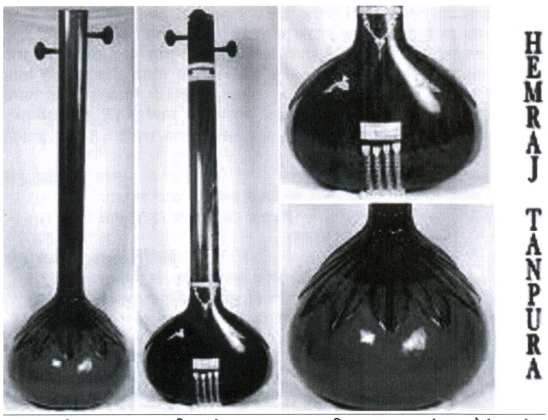

तुम्बा एवं डाट तबली एवं अग्रभाग तबली, घुड़च्च एवं मनके(ऊपर) तुम्बा एवं गुलू(नीचे)

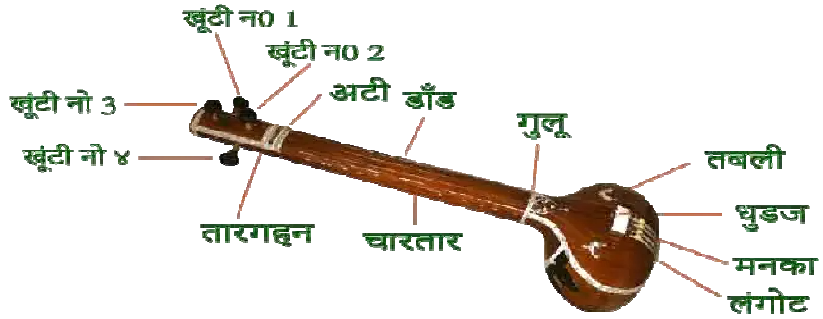

5.3.3 तानपुरा और सहायक नाद – तानपुरे में मूल स्वरों के साथ कुछ सहायक नाद भी होते हैं। इसका तात्पर्य है कि जो स्वर तानपुरे में मिलाए जाते हैं उसके अतिरिक्त अन्य सातों स्वरों की उत्पत्ति भी तानपुरे की गूंज में समाहित होती है। मूल स्वरों के अतिरिक्त अन्य स्वर सहायक नाद अथवा स्वयंभू स्वर कहलाते हैं। तानपुरे के चार तार जिनमें षड्ज, मध्यम, पंचम या निषाद स्वर मिलाए जाते हैं वह गायक–वादक को सातों स्वरों का आभास देते हैं जिससे संगीतज्ञ सुर से बाहर नहीं जाता। इसी कारण तानपुरे वाद्य को स्वर साधना के लिए सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। विद्वानों का मानना है कि तानपुरे में स्वर अभ्यास से स्वरों पर पर्याप्त अधिकार प्राप्त किया जा सकता है।

5.3.4 तानपुरे को मिलाने की विधि – तानपुरे में चार तार होते हैं। सबसे पहला तार मन्द्र पंचम(प) पर और दूसरा, तीसरा तार मध्य षड्ज(स) पर तथा चौथा अन्तिम तार मन्द्र षड्ज(सा) पर मिलाया जाता है। जब तानपुरे को मिलाकर इन स्वरों पर छेड़ा जाता है तो यह षड्ज–पंचम संवाद कहलाता है। यह संवाद भारतीय संगीत के लिए सबसे उत्तम माना जाता है। जिन रागों में पंचम स्वर नहीं प्रयुक्त होता उसके लिए तानपुरे पर मध्यम(म) स्वर मिलाया जाता है।

एक अन्य प्रकार से भी तानपुरा मिलाया जाता है जिसमें पहले तार को निषाद(नि) पर मिलाया जाता है। ऐसा तब किया जाता है जब हम उन रागों को गाते बजाते हैं जिनमें शुद्ध मध्यम को छोड़ तीव्र मध्यम का प्रयोग होता है। इन रागों में पूरिया, मारवा, हिंडोल, सोहनी आदि प्रमुख हैं। अब हम यह बता देते हैं कि अगर तानपुरे में स–प मिला हो तो हमें मध्यम स्वर नहीं मिलता। इसीलिए दो तानपुरे लेकर एक को स–प तथा दूसरे को स–नि पर मिलाएँ तब हमें सातों स्वरों(स्वयभूं स्वरों) की प्राप्ति हो सकेगी। ये सहायक नाद हैं। इनका भारतीय संगीत के क्षेत्र में विशेष महत्व है। सातों स्वरों की प्राप्ति के कारण ही तानपुरा सबसे उपयोगी संगत वाद्य माना गया है। इसकी गूंज से संगीतज्ञ राग से दूर नहीं जाता है। रागों को संतुलित वातावरण तानपुरे द्वारा ही प्राप्त होता है।

5.3.5 तानपुरे के प्रकार एवं वादन विधि – तानपुरे दो प्रकार के होते हैं :

1. स्त्रियों का तानपुरा 2. पुरूषों का तानपुरा

1. स्त्रियों के तानपुरे का तुम्बा पुरूषों की तुलना में छोटा होता है। स्त्री तानपुरे के तार भी बारीक रहते हैं। प्रथम तीन तार फौलाद के तथा चौथा तार पीतल का होता है।

2. पुरूषों के तानपुरा का तुम्बा बहुत बड़ा होता है क्योंकि पुरूष गलें में स्वर गम्भीर एवं नीचा होता है तथा बड़े तुम्बे में स्वर में बहुत गम्भीरता रहती है। इस तानपुरे में तार स्त्रियों की तुलना में मोटे होते हैं क्योंकि स्त्रियों का स्वर स्वाभाविक रूप से पुरूषों की तुलना में अधिक ऊँचा होता है।

तानपुरा बजाते समय स्वयं गायक एवं तानपुरा संगतकार कई तरह की मुद्रा में बैठते हैं। कुछ संगतकार एक घुटना खड़ा करके तथा दूसरे को जमीन पर लगाकर तानपुरा बजाते हैं। कुछ संगीतज्ञ तानपुरे को जमीन में सीधा रखकर दोनों पैरों को मोड़कर बैठक में संगत करते हैं। कुछ संगतकार तानपुरे को कंधे में सटाकर दोनों पैरों को मोड़कर बैठक में भी बजाते हैं। दाँए हाथ की अंगुलियों से तार पर प्रहार करके तानपुरा बजाया जाता है। पहले तार को मध्यमा उंगली से तथा शेष तीन तारों को तर्जनी उंगली से बजाते हैं। तानपुरे का पहला तार ही क्रमशः प, म, नि स्वरों पर रागानुकूल परिस्थिति के आधार पर मिलाया जाता है अन्य तीन तार मध्य एवं मन्द्र षड्ज पर मिलाए जाते हैं।

षड्ज तथा पंचम का इतना घनिष्ठ संवाद है कि दोनों का साथ–साथ उच्चारण कर्णप्रिय लगता है। इस वाद्य के तारों की झंकार या गूंज किसी भी राग एवं उसके गीत और स्वर विस्तार के साथ ऐसे घुल मिल जाती है कि किसी भी पृथकता का अनुभव नहीं होता है। यह वाद्य वादन संगीत में भी प्रत्येक वाद्य का सहचर सिद्ध होता है तथा उसके प्रभाव को और बढ़ाने में सहायता करता है। इस प्रकार तानपुरा भारतीय संगीत की आत्मा तथा मूलाधार है। वर्तमान में तानपुरा वाद्य में कहीं–कहीं पॉच, छः तारों का भी प्रयोग दिखाई देता है। दक्षिण भारत में तम्बूरे में दो तुम्बे लगाने की व्यवस्था भी नज़र आती है।

अभ्यास प्रश्न :

---

1) लघु उत्तरीय प्रश्न :

(i) तानपुरा वाद्य में स्वरों को किस प्रकार मिलाया जाता है?

(ii) तानपुरे के प्रकारों को बताइए।

2) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) तानपुरे के आविष्कारक कौन थे?

(ii) तानपुरे का प्रथम तार किस स्वर पर मिलाते हैं?

(iii) किस वाद्य से तानपुरा की उत्पत्ति मानी जाती है?

3) सत्य/असत्य बताइए :

(क) तानपुरे में तीन तार होते हैं।

(ख) तानपुरे के तारों में गूंज के लिए लकड़ी लगाई जाती है।

(ग) राग पूरिया, मारवा में तानपुरे के प्रथम तार को निषाद में मिलाते हैं।

5.4 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात आप जान चुके हैं कि संगीत लोकरंजन के साथ आत्मसाक्षात्कार का साधन भी है। मध्यकाल में ध्रुपद गायन शैली का प्रचार था परन्तु वर्तमान में ख्याल गायन शैली का प्रचार सबसे अधिक है। एक ही राग को ख्याल गायन शैली के अन्तर्गत भिन्न–भिन्न तरीकों से गाया जाता है। इसमें गीत रचनाओं का विस्तार भी बहुत अधिक है। गीत रचना एवं गायन शैली दोनों दृष्टियों में ख्याल का विशेष स्थान है। इस इकाई में आप जान चुके हैं कि ख्याल गायन शैली में राग के भीतर का सौन्दर्य निर्माण विशेष रूप से गायक की कल्पना एवं प्रतिभा पर निर्भर करता है। ख्याल गायन शैली के विशिष्ट घरानों के विषय में भी आप जान चुके है कि घरानों के संगीतज्ञों ने अपनी एक अलग गायन शैली का निर्माण कर अत्यधिक सम्मान प्राप्त किया। आप यह भी जान चुके है कि विभिन्न घरानों की गायन शैली की विशेषताएँ भिन्न–भिन्न हैं तथा कौन कलाकार किस घराने से सम्बन्धित है।

आप इस इकाई में यह भी जान चुके हैं कि वर्तमान समय में संगत के लिए गायन–वादन हेतु तानपुरा वाद्य सबसे महत्वपूर्ण है। गायकी के सम्पूर्ण तत्वों का स्पष्टीकरण एकमात्र तानपुरे से ही सम्भव है। साथ ही आप तानपुरे को देखते ही उसके समस्त अंगों के विषय में जान सकेंगे। संगीत के क्षेत्र में स्वर साधना के लिए तानपुरा सर्वोत्तम वाद्य है।

5.5 शब्दावली

1. **अलंकार** : विभिन्न स्वर समुदाय जो एक नियमबद्ध तरीके से बधे हुए हों।
2. **उपशास्त्रीय संगीत** : शास्त्रीय संगीत के अतिरिक्त उपशास्त्रीय संगीत में नियमों में शिथिलता रहती है, जैसे– ठुमरी गायन।
3. **मींड़** : एक स्वर से दूसरे स्वर में झूमते हुए आने को मीड़ कहते हैं।
4. **त्रिवट** : त्रिवट वह गायन विधा है जिसमें तीन तरह के बोलों का प्रयोग होता है, जैसे – शब्द, तालवर्ण, तराने के शब्द।
5. **चतुरंग** : त्रिवट के समान इसमें तीन की बजाए चार बोलों का प्रयोग होता है, इसमें सरगम और जोड़ी जाती है।
6. **सादरा गायन** : सादरा गायन उपशास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत आती है। यह विशेष रूप से झपताल में निबद्ध होती है।
7. **वक्र, फिरत** : यह तानों के प्रकार है। वक्र में स्वरों को लगातार क्रम में नहीं लेते हैं तथा फिरत

में स्वरों को लगातार एक नियमबद्ध तरीके से घुमाते रहते हैं।

8. **ग्राम मूर्च्छना** : प्राचीन काल में राग गायन की परम्परा नहीं थी। उस समय ग्राम एवं मूर्च्छना का प्रचलन था। मूर्च्छना से जातियों की उत्पत्ति होती थी जो राग के समान गायी जाती थी।
9. **प्रबन्ध** : ख्याल गायन से पूर्व ध्रुपद गायन का तथा ध्रुपद से पूर्व प्रबन्ध गायन का प्रचलन था।
10. **मेरखण्ड** : स्वरों के निश्चित क्रम को जिसमें एक के बाद एक स्वर को स्थान मिलाते हुए गायन हो उसे मेरखण्ड गायकी कहते हैं।

5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

i) उत्तर : तुम्बरू

ii) उत्तर : पंचम

iii) उत्तर : त्रितंत्री वीणा

3) सत्य असत्य बताइए :

उत्तर : (क) असत्य (ख) असत्य (ग) सत्य

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बृहस्पति, डॉ0 सौभाग्यवर्द्धन, (2004), *संगीत चिन्तन प्रथम खण्ड*, अभिषेक पब्लिकेशन, चण्डीगढ़।
2. सक्सेना, डॉ0 मधुबाला, (1985), *ख्याल शैली का विकास*, विशाल पब्लिकेशन, कुरूक्षेत्र।
3. परांजपे, डॉ0 शरच्चन्द्र श्रीधर (1992), *संगीत बोध*, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
4. साभार गूगल।

5.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. कौर, डॉ0 भगवन्त, *परम्परागत हिन्दुस्तानी सैद्धान्तिक संगीत*, कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
2. वसन्त,(1997), *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय, हाथरस।

5.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. तानपुरे के स्वरूप एवं उसके वादन विधि का वर्णन कीजिए।

इकाई 6– संगीत का मानव जीवन में महत्व (सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रभावना आदि पहलुओं पर आधारित) ।

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 संगीत का मानव जीवन में महत्व
6.1.1 सामाजिक
6.1.2 मनोवैज्ञानिक
6.1.3 सांस्कृतिक
6.1.4 राष्ट्रभावना

6.7 सारांश
6.8 शब्दावली
6.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
6.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
6.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
6.12 निबन्धात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम बी0ए0एम0वी0(एन0)–350 के की षष्ठम् इकाई है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपको रागों और तोलों के अध्ययन के बारे में जानकारी प्राप्त हुई होगी।

इस इकाई में संगीत का मानव जीवन में महत्व (सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रभावना आदि के बारे में अध्ययन कर इसकी सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :–

- संगीत के सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक महत्व को समझना।
- विभिन्न प्रकार के संगीत और उनके जीवन पर प्रभाव का अध्ययन करना।
- राष्ट्रभावना और प्रेरणा में संगीत की भूमिका को पहचानना।
- संगीत की सामाजिक, शैक्षिक एवं सांस्कृतिक भूमिका का अध्ययन।
- मानव जीवन पर संगीत के मनोवैज्ञानिक प्रभावों का विश्लेषण।
- संगीत को आधारभूत आवश्यकता के रूप में स्थापित करना।

6.3 संगीत का मानव जीवन में महत्व

संगीत मानव जीवन का एक अत्यंत महत्वपूर्ण और अभिन्न हिस्सा है। यह केवल मनोरंजन का साधन नहीं है, बल्कि यह भावनाओं, मानसिक स्थिति, सामाजिक संपर्क, सांस्कृतिक पहचान और आध्यात्मिक अनुभवों को भी प्रभावित करता है। वैदिक काल से लेकर आधुनिक समय तक, संगीत ने मानव जीवन में उल्लास, शांति और प्रेरणा का स्रोत प्रदान किया है। संगीत का प्रभाव हर आयु वर्ग पर पड़ता हैकृ बच्चों की सीखने की क्षमता, युवाओं की मानसिक शक्ति, वयस्कों की सहनशीलता और वृद्धों की मानसिक शांति। इसलिए इसे मानव जीवन की आधारभूत आवश्यकता माना जा सकता है। संगीत मानव जीवन की वह सशक्त अभिव्यक्तिपूर्ण कला है, जो व्यक्ति के मन, विचार, व्यवहार और सामाजिक संरचना को प्रभावित करती है। समाज के इतिहास, परंपराओं, उत्सवों, धार्मिक अनुष्ठानों और सामाजिक गतिविधियों में संगीत का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। यह केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक एकता, सांस्कृतिक पहचान, सामूहिक भावनाओं और सामाजिक मूल्यों का वाहक है।

संगीत मानव समाज की एक प्राचीन और प्रभावशाली धरोहर है, जिसकी जड़ें मानव सभ्यता के आरंभिक विकास से ही जुड़ी हैं। यह केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि मानव जीवन के सामाजिक,

सांस्कृतिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक पक्षों को प्रभावित करने वाला एक प्रमुख माध्यम है। विभिन्न सभ्यताओं, धर्मों, जातीय समूहों तथा सामाजिक समुदायों के विकास में संगीत की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। सामाजिक जीवन की हर गतिविधिकृउत्सव, संस्कार, श्रम, आध्यात्मिकता तथा सामूहिक अभिव्यक्तिकृसंगीत के बिना अधूरी मानी जाती है।

यह अध्याय संगीत की सामाजिक प्रासंगिकता, उसके सामुदायिक कार्य, सामाजिक मूल्यों के निर्माण, संगीत मानव मन का स्वाभाविक आहार है। यह न केवल हमारी भावनाओं को अभिव्यक्त करता है, बल्कि सामाजिक जीवन में मानसिक संतुलन, सामूहिकता और सकारात्मक व्यवहार को भी विकसित करता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से संगीत मानव मस्तिष्क और भावनाओं पर गहरा प्रभाव डालता है।

मानव जीवन के अस्तित्व के लिए रोटी, कपड़ा और मकान चिरकाल से मूलभूत आवश्यकताएं रही हैं। आधुनिक काल में मानव के लिए कला, शिक्षा, स्वास्थ्य देखरेख और सफाई भी उतनी ही आवश्यक हो गई हैं। हम जैसे–जैसे विकासशील देश से विकसित देश बनने की दिशा में प्रगति कर रहे हैं वैसे–वैसे ही हमारी बुनियादी जरूरतें भी बदलती जा रही हैं। हमारे दैनिक जीवन में संगीत की बहुत अहम भूमिका है। भारत की परंपरा बहुत समृद्ध रही है और देश के सभी भागों में संगीत और कला की विविध विधाएं विकसित और पल्लवित होती रही हैं। इनमें से कई विधाएं तो वैदिक काल से चली आ रही हैं और अनेक विधाएं समय के साथ विकसित हुई हैं जबकि कुछ विधाएं समय बीतने के साथ विस्मृत हो चुकी हैं।

भार्तृहरि शतक के एक श्लोक की पहली पंक्ति है–

"साहित्यसंगीतकलाविहीनः साक्षात्पशुः पुच्छ विषाणहीनः।"

इसका भाव यह है कि साहित्य, संगीत और कलाओं की जानकारी से रहित मनुष्य बिना पूंछ और सींगों वाले पशु के समान ही होता है। ऐसे पशु को अपूर्ण ही माना–समझा जाएगा; इसी प्रकार साहित्य, संगीत और कलाओं का ज्ञान न रखने वाले व्यक्ति को ज्ञानी या विद्वान नहीं कहा जा सकता। शिक्षा के हर स्तर पर संगीत की विशेष भूमिका है। स्कूली शिक्षा के दौरान तो इसका महत्व और भी अधिक होता है। संगीत से बच्चों में अनुशासन आता है और लगन पैदा होती है सांस्कृतिक संरक्षण और सामूहिक चेतना पर इसके प्रभाव का विस्तार से अध्ययन प्रस्तुत करता है।

संगीत सीखने और संगीत का अभ्यास करने से बच्चों में समय का महत्व जानने और समय का प्रबंधन करने की क्षमता पनपती है जिससे उन्हें आवश्यक मुद्दों पर अधिक ध्यान देने की समझ आती है। जीवन के प्रारंभिक काल में ही इन मूल्यों का विकास होने से बच्चों को जीवन में आगे चलकर अनेकानेक लाभ प्राप्त होते हैं। यदि बच्चों में प्री–प्राइमरी या प्राइमरी–प्राथमिक पूर्व अथवा प्राथमिक स्तर पर इन गुणों का विकास हो जाए तो वे हाई–स्कूल में पढ़ाई–लिखाई का बोझ सहज ही सरलता से सह लेंगे और उस स्तर पर उनका प्रदर्शन निश्चय ही कहीं बेहतर होगा।

संगीत से बच्चों पर पाठ्यसामग्री का बोझ तो कम होता ही हैं, इससे उनके मन में उठ रहे द्वंद्व और विवाद भी शांत होने लगते हैं।

फिर, उन्हें संगीत के माध्यम से अपनी भावनाएं व्यक्त करने का अवसर मिल जाता है। संगीत के माध्यम से बच्चों में भावात्मक संतुलन आता है और सौंदर्य बोध की अभिव्यक्ति की क्षमता के विकास से उनमें सद्भाव जागृत हो जाता है। यदि ऐसे महत्वपूर्ण मोड़ पर संगीत को पाठ्यक्रम का विषय बना लिया जाए और बच्चे को उच्च शिक्षा के लिए संगीत को ही विषय चुनने का विकल्प मिल सके तो उनके लिए बहुत ही लाभप्रद सिद्ध होगा क्योंकि बाल्यकाल से ही संगीत सीखना शुरू कर देने से इसे कॉलेज की पढ़ाई से जोड़ना भी सहज हो जाएगा।

संगीत का अभ्यास करने और उसके सिद्धांतों का ज्ञान प्राप्त करने से दोनों क्षेत्रों को समान महत्व मिलेगा जो बहुत उपयोगी सिद्ध होगा। वाद्य यंत्रों की कार्यप्रणाली के बारे में चर्चा से स्वर की संरचना को – बारीकी से समझने में मदद मिलेगी और विद्यार्थियों में उसके प्रति रुचि एवं जिज्ञासा जागृत होगी। इससे संगीत की हमारी प्राचीन परंपराओं के बारे में ऐतिहासिक दृष्टिकोण विकसित होगा और साथ ही विद्यार्थी को विषय की भाषा और शब्दावली सीखने तथा संगीत की विभिन्न परिभाषाओं और उक्तियों को भली प्रकार जानने–समझने में भी सरलता होगी। इसी अवस्था में बच्चों में संगीत के सौंदर्य को परखने और उसे ग्रहण करने की उत्सुक्ता जगेगी जिससे उन्हें 'रागों' की विशेषताएं जानने और विभिन्न 'स्वरों' को गाकर या बजाकर उन्हें पहचानने की क्षमता विकसित करने में बड़ी सफलता मिल सकेगी। संगीत के सौंदर्य को समझकर उसे सराहने की क्षमता हासिल करने के लिए किसी उच्च कलाकार को सुनते रहना अत्यंत महत्वपूर्ण होता है और इसके लिए सिद्धहस्त गुरु के चरणों में बैठकर संगीत सुनने की कठिन साधना करनी पड़ती है। शास्त्रीय संगीत के प्रति मूल भाव विकसित करने के लिए 'सुर', 'स्वर' और 'संगीत रचनाओं' का अध्ययन सबसे ज़्यादा आवश्यक और महत्वपूर्ण होता है।

संगीत मानव संस्कृति का एक अभिन्न हिस्सा है। यह केवल कला का रूप नहीं बल्कि परम्पराओं, मान्यताओं और सामाजिक व्यवहारों का जीवंत दर्पण है। आदिम युग से लेकर आधुनिक सभ्यता तक,

संगीत ने सांस्कृतिक निरंतरता को बनाए रखते हुए मानव जीवन को सौन्दर्य, ऊर्जा और एकता से जोड़ने का कार्य किया है। संगीत मानव संवेदनाओं की वह मधुर अभिव्यक्ति है, जो व्यक्ति के हृदय में न केवल भावनाओं का संचार करती है, बल्कि समाज और राष्ट्र के प्रति गहन निष्ठा, समर्पण और गौरव की भावना भी जगाती है। किसी भी राष्ट्र की सांस्कृतिक पहचान उसके संगीत में सुरक्षित रहती है। राष्ट्रीय गान, देशभक्ति गीत, लोकसंगीत, युद्धगीत और सांस्कृतिक संगीत परंपराएँ मिलकर नागरिकों के भीतर राष्ट्रीय भक्ति जागृत करती है।

6.1.1 संगीत का मानव जीवन में सामाजिक महत्व

संगीत मानव समाज की सामूहिक चेतना का सशक्त माध्यम है। यह व्यक्ति को समाज से जोड़ता है और सामाजिक जीवन को संतुलन, सौहार्द और एकता प्रदान करता है। सामाजिक दृष्टि से संगीत केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक मूल्यों, परंपराओं और मानवीय संबंधों को सुदृढ़ करने वाला तत्व है। संगीत विभिन्न वर्गों, जातियों और समुदायों को एक सूत्र में बाँधता है। सामूहिक गायन, लोकगीत, भजन, कीर्तन और राष्ट्रीय गीत सामाजिक एकता की भावना को प्रबल करते हैं। जन्म, विवाह, उत्सव, पर्व, धार्मिक अनुष्ठान और अंतिम संस्कार जैसे सामाजिक अवसरों पर संगीत अनिवार्य रूप से जुड़ा होता है। यह सामाजिक परंपराओं को जीवंत बनाए रखता है। संगीत के माध्यम से प्रेम, करुणा, वीरता, भक्ति और उल्लास जैसी सामाजिक भावनाओं की अभिव्यक्ति होती है। यह समाज के सामूहिक अनुभवों को स्वर देता है। सांस्कृतिक संरक्षण और पीढ़ीगत संवाद से लोक–संगीत और पारंपरिक गीतों के माध्यम से संस्कृति, इतिहास और सामाजिक मूल्य एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचते हैं। संगीत सामाजिक तनाव, हिंसा और मानसिक अशांति को कम करने में सहायक है। यह समाज में सहिष्णुता और मानवीय संवेदनाओं को बढ़ाता है। श्रमगीत, लोकधुनें और सामूहिक वादन कार्यस्थलों पर ऊर्जा, सहयोग और उत्साह उत्पन्न करते हैं, जिससे सामाजिक सहयोग बढ़ता है।

राष्ट्रभावना और सामाजिक चेतना देशभक्ति गीत, राष्ट्रीय गान और प्रेरक रचनाएँ समाज में राष्ट्रप्रेम, कर्तव्यबोध और सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना विकसित करती हैं। संगीत सामाजिक भेदभाव को कम करता है और समावेशी समाज के निर्माण में सहायक होता है।

6.1.2 संगीत का मानव जीवन में मनोवैज्ञानिक महत्व

संगीत मानव मन और मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव डालने वाली कला है। यह भावनाओं, विचारों और व्यवहार को संतुलित कर मानसिक स्वास्थ्य को सुदृढ़ बनाता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से संगीत न केवल मनोरंजन है, बल्कि एक प्रभावी उपचारात्मक और विकासात्मक माध्यम भी है। संगीत के माध्यम से व्यक्ति अपने हर्ष, विषाद, प्रेम, करुणा, क्रोध और उल्लास जैसी भावनाओं को सहज रूप से व्यक्त कर सकता है। इससे भावनात्मक दमन कम होता है। संगीत तनाव, चिंता और अवसाद को कम करने में सहायक होता है। मधुर और शांत संगीत मन को शांति प्रदान करता है और मानसिक संतुलन बनाए रखता है। संगीत मस्तिष्क की सक्रियता बढ़ाता है, जिससे स्मरण शक्ति, ध्यान और एकाग्रता में वृद्धि होती है। विद्यार्थियों के लिए यह विशेष रूप से लाभकारी है। गायन, वादन और ताल अभ्यास से व्यक्ति में आत्मविश्वास बढ़ता है और आत्म–अभिव्यक्ति की क्षमता विकसित होती है। संगीत–चिकित्सा का प्रयोग मानसिक रोगों, अनिद्रा, तनाव और भावनात्मक विकारों के उपचार में किया जाता है। संगीत अनुशासन, धैर्य, संवेदनशीलता और रचनात्मकता को बढ़ाता है, जिससे संतुलित व्यक्तित्व का निर्माण होता है। बाल्यावस्था में संगीत सीखने से भावनात्मक स्थिरता, सामाजिक व्यवहार और बौद्धिक विकास होता है।

संगीत वृद्ध व्यक्तियों को मानसिक शांति, स्मृतियों के संचार और एकाकीपन से मुक्ति दिलाने में सहायक होता है।

संगीत मानव सभ्यता की प्राचीन धरोहर है। भारत में वैदिक परंपरा, सामवेद, लोक–संगीत और शास्त्रीय संगीत ने सांस्कृतिक निरंतरता बनाए रखी है। समय के साथ अनेक विधाएँ विकसित हुईं, कुछ विस्मृत हुईं, पर संगीत की केंद्रीय भूमिका बनी रही। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से संगीत मानव मस्तिष्क और भावनाओं पर गहरा प्रभाव डालता है। यह मानसिक संतुलन, तनाव–नियंत्रण और सकारात्मक व्यवहार को बढ़ावा देता है। संगीत मानव मन का स्वाभाविक आहार है, जो भावनात्मक अभिव्यक्ति और आंतरिक शांति प्रदान करता है।

6.1.3 संगीत का मानव जीवन में सांस्कृतिक महत्व

संगीत मानव संस्कृति का अभिन्न और जीवंत अंग है। यह किसी भी समाज की परंपराओं, मान्यताओं, जीवन–शैली और सांस्कृतिक पहचान को अभिव्यक्त करता है। आदिम युग से आधुनिक युग तक संगीत ने सांस्कृतिक निरंतरता बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। किसी भी समाज या राष्ट्र की सांस्कृतिक पहचान उसके संगीत में सुरक्षित रहती है। लोक–संगीत, शास्त्रीय संगीत और धार्मिक संगीत उस समाज की आत्मा को प्रतिबिंबित करते हैं। विवाह गीत, संस्कार गीत, पर्व–त्योहारों के गीत और

लोकधुनें पीढ़ी–दर–पीढ़ी सांस्कृतिक परंपराओं को जीवित रखती हैं। लोक–संगीत जनजीवन, श्रम, प्रकृति और सामाजिक अनुभवों से जुड़ा होता है। यह स्थानीय संस्कृति और भाषा के संरक्षण में सहायक है। भजन, कीर्तन, सूफी संगीत, गुरबाणी और स्तुति–गान धार्मिक एवं आध्यात्मिक संस्कृति को सुदृढ़ करते हैं और आस्था को गहराई प्रदान करते हैं। संगीत विभिन्न संस्कृतियों के बीच संवाद स्थापित करता है। भारतीय संगीत में विविधता होते हुए भी एकता का भाव दिखाई देता है। नृत्य, संगीत समारोह, सांस्कृतिक महोत्सव और मेलों में संगीत सामूहिक आनंद और सांस्कृतिक चेतना को बढ़ाता है। प्राचीन ग्रंथों, रागों और परंपराओं के माध्यम से संगीत इतिहास और संस्कृति की अमूल्य धरोहर को सुरक्षित रखता है।

6.1.4 संगीत का मानव जीवन में राष्ट्रभावना से संबंधित महत्व

संगीत राष्ट्रभावना को जागृत करने का अत्यंत प्रभावशाली माध्यम है। यह व्यक्ति में देश के प्रति प्रेम, निष्ठा, त्याग और समर्पण की भावना उत्पन्न करता है। स्वतंत्रता आंदोलन से लेकर आधुनिक भारत तक, संगीत ने जनमानस को राष्ट्र के प्रति एकजुट करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। संगीत विभिन्न भाषाओं, धर्मों और क्षेत्रों के लोगों को एक सूत्र में बाँधता है। राष्ट्रीय गान और देशभक्ति गीत सामूहिक रूप से गाए जाने पर एकता की अनुभूति कराते हैं। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान देशभक्ति गीतों ने जनसामान्य में उत्साह, साहस और बलिदान की भावना जगाई। 'वंदे मातरम्' और 'सारे जहाँ से अच्छा' जैसे गीतों ने राष्ट्रीय चेतना को प्रखर किया। राष्ट्रीय गान देश की अस्मिता और सम्मान का प्रतीक है। इसके गायन से नागरिकों में अनुशासन, सम्मान और राष्ट्र के प्रति श्रद्धा का भाव विकसित होता है। सेना, परेड और युद्ध–गीतों में प्रयुक्त संगीत वीरता, साहस और कर्तव्यनिष्ठा की भावना को प्रबल करता है। भारत जैसे बहुसांस्कृतिक राष्ट्र में संगीत विविधताओं को जोड़कर राष्ट्रीय समरसता को सुदृढ़ करता है। देशभक्ति गीत, प्रेरक संगीत और सांस्कृतिक प्रस्तुतियाँ युवाओं में राष्ट्र के प्रति जिम्मेदारी और जागरूकता उत्पन्न करती हैं। स्वतंत्रता दिवस, गणतंत्र दिवस और अन्य राष्ट्रीय पर्वों पर संगीत कार्यक्रम राष्ट्रीय गौरव और सामूहिक उत्साह को बढ़ाते हैं। अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भारतीय संगीत देश की सांस्कृतिक पहचान और राष्ट्र की गरिमा को प्रतिष्ठित करता है।

6.7 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप यह जान चुके होंगे कि संगीत केवल ध्वनि या सुरों का समूह नहीं है, बल्कि यह मानव जीवन के हर पहलू को प्रभावित करता है। सामाजिक संबंध, मानसिक स्वास्थ्य, सांस्कृतिक पहचान, राष्ट्रप्रेम और आध्यात्मिक उन्नति में इसका महत्व अमूल्य है। संगीत मानव जीवन को सुंदर, सार्थक और प्रेरणादायक बनाता है। संगीत मानव जीवन में केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि राष्ट्रभावना का अत्यंत शक्तिशाली स्रोत है। यह राष्ट्रीय एकता, सामूहिक पहचान, देशप्रेम, सांस्कृतिक गौरव और इतिहास को जोड़कर नागरिकों को राष्ट्र के प्रति समर्पित होने की प्रेरणा देता है। इसलिए कहा जाता है कि "संगीत केवल स्वर नहीं, बल्कि राष्ट्र की आत्मा है। संगीत मानव सामाजिक जीवन के प्रत्येक पहलू को प्रभावित करता है। यह सामाजिक एकता का माध्यम, सांस्कृतिक परंपराओं का आधार, भावनात्मक संतुलन का साधन और सामाजिक मूल्यों का संवाहक है। संगीत समाज की संवेदनशीलता, सामूहिकता और सौहार्द को बढ़ाकर उसे अधिक सभ्य और समृद्ध बनाता है। अतः यह कहा जा सकता है कि संगीत मानव समाज का आधारदृस्तम्भ है, जिसके बिना सामाजिक जीवन की परिकल्पना अधूरी है।

संगीत मानव संस्कृति का जीता–जागता आधार है। यह न केवल मनोरंजन का माध्यम है, बल्कि सांस्कृतिक पहचान, परम्परा, आध्यात्मिकता, एकता और विविधता को संरक्षित करने वाला सशक्त उपकरण भी है। संगीत के बिना मानव संस्कृति अधूरी है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से संगीत मनुष्य के मानसिक स्वास्थ्य, भावनात्मक संतुलन, सामाजिक सामंजस्य, व्यक्तित्व विकास और कार्यक्षमता को प्रभावित करता है। यह न केवल मन को शांत करता है, बल्कि सामाजिक जीवन में सामूहिक भावनाओं और सकारात्मक व्यवहार को भी बढ़ाता है। इसलिए संगीत मानव सामाजिक जीवन में एक मनोवैज्ञानिक सहारा और मानसिक ऊर्जा का स्रोत है।

6.8 शब्दावली

संगीतः स्वर, लय और ताल के संयोजन से उत्पन्न कला, जो भावों की अभिव्यक्ति करती है।

स्वरः संगीत की मूल ध्वनि इकाई, जिससे राग की रचना होती है।

लयः समय के प्रवाह में गति और ठहराव का संतुलन।

तालः मात्राओं का निश्चित चक्र, जो संगीत को संरचना देता है।

रागः निश्चित स्वर–संरचना और भावात्मक स्वरूप वाला संगीतात्मक ढांचा।

शास्त्रीय संगीतः शास्त्रों और परंपराओं पर आधारित सुव्यवस्थित संगीत प्रणाली।

लोक–संगीतः जनजीवन से जुड़ा, क्षेत्रीय परंपराओं पर आधारित संगीत।

सामवेदः वेदों में वह ग्रंथ, जिसमें गायनात्मक मंत्रों का संकलन है।

श्रवण–साधनाः गुरु के सान्निध्य में संगीत सुनकर सीखने की प्रक्रिया।

सौंदर्य–बोधः कला के सौंदर्य को समझने और अनुभव करने की क्षमता।

भावात्मक संतुलनः भावनाओं का संतुलित और सकारात्मक नियमन।

राष्ट्रभावनाः राष्ट्र के प्रति निष्ठा, गर्व और समर्पण की चेतना।

सांस्कृतिक विरासतः पीढ़ी–दर–पीढ़ी संचित कला, परंपराएँ और मूल्य।

6.9 अभ्यास प्रश्न

क. लघु उत्तरीय प्रश्न :–

1. गीत गोविन्द पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
2. मानसिंह तोमर काल में संगीत की स्थिति को संक्षेप में समझाइए।
3. आधुनिक कालीन प्रसिद्ध संगीत ग्रंथों के नाम बताइए।
4. उस्ताद अलाउद्दीन खां के सांगीतिक योगदान को बताइए।

ख. सत्य/असत्य बताइए :–

1. मैरिस म्यूजिक कॉलेज इलाहाबाद में स्थित है।
2. अभिनव राग मंजरी के रचयिता पं.वि.दिगम्बर पुलस्कर हैं।
3. भक्ति आंदोलन के प्रचारकों में सूरदास प्रमुख थे।
4. तानसेन द्वारा राग मियां की सारंग की रचना हुई।

ग. रिक्त स्थान की पूर्ति :–

1. संगीत दर्पण ग्रंथ के लेखक _____ हैं।
2. गीत गोविन्द की रचना _____शताब्दी में हुई।
3. सर्वप्रथम सन् _____ में लाहौर गन्धर्व महाविद्यालय की स्थापना हुई।
4. पं.ओमकार नाथ ठाकुर को सन् _____में पद्मश्री से सम्मानित किया गया।**1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर**

ख. सत्य/असत्य बताइए :–

- संगीत केवल मनोरंजन का साधन है। (असत्य)
- संगीत सामाजिक एकता को सुदृढ़ करता है। (सत्य)
- सामवेद का संबंध संगीत से नहीं है। (असत्य)

- संगीत बच्चों में अनुशासन और समय–प्रबंधन विकसित करता है। (सत्य)
- संगीत का मानव मन पर कोई मनोवैज्ञानिक प्रभाव नहीं पड़ता। (असत्य)

ग. रिक्त स्थान की पूर्ति :–

- संगीत मानव जीवन की एक ———————— आवश्यकता है। (आधारभूत)
- ———————— काल से भारतीय संगीत परंपरा चली आ रही है। (वैदिक)
- भार्तृहरि ने ———————— शतक में साहित्य और संगीत का महत्व बताया है। (नीति)
- राग और स्वर का अध्ययन ———————— संगीत का आधार है। (शास्त्रीय)
- राष्ट्रीय गान और देशभक्ति गीत ———————— भावना को जागृत करते हैं। (राष्ट्र)

6.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- शारंगदेव – संगीत रत्नाकर
- पं. विष्णु नारायण भातखंडे – हिंदुस्तानी संगीत पद्धति
- डॉ. प्रेमलता शर्मा – भारतीय संगीत का इतिहास
- भार्तृहरि – नीति शतक
- आचार्य बृहस्पति – भारतीय संगीत चिंतन

6.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्रीः

- भार्तृहरि – नीति शतक
- आचार्य बृहस्पति – भारतीय संगीत चिंतन

6.12 निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. संगीत का मानव जीवन के सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में योगदान स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 2. शिक्षा और मनोविज्ञान के क्षेत्र में संगीत की भूमिका का विवेचन कीजिए।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, जिला नैनीताल, पिनकोड–263139
फोन नं0 : 05946–286000 / 01 / 02
फैक्स नं0 : 05946–264232,
टोल फ्री नं0 : 18001804025
ई–मेल : **info@uou.ac.in**
वेबसाईट : **www.uou.ac.in**